जुलाई 2015 वार्षिक मूल्य ₹ 150

साधन

संस्थापक : समर्थ गुरु परम संत डा. चतुर्भुज सहाय जी

ॐ

रामाश्रम सत्संग, मथुरा

ॐ

साधन

जुलाई-2015

❁ अनुक्रमणिका ❁

क्रमांक क्या — कहाँ

ॐ

साधन

वेद-मंत्र

आद्याद्या श्वः श्व इन्द्र त्रास्व परे च नः।
विश्वा च नो जरितॄन्त्सत्पते अहा दिवा नक्तं च रक्षिषः॥

— ऋग्वेद 8।61।17, सामवेद/उतरार्चिक (13/3)

हे इन्द्र! हे परमेश्वर! आज, कल और परसों अर्थात् हमेशा तू हमारी रक्षा कर। हे सज्जनों के पालक परमात्मन्! सब दिन हम स्तुति करने वालों (साधकों-उपासकों) की दिन-रात रक्षा कर। हे ज्ञानपते गुरुदेव, दया करो—रक्षा करो! रक्षा करो! रक्षा करो!

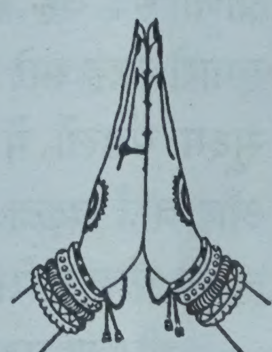
ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

वर्ष : 82 अंक : 12	**जुलाई-2015**	वार्षिक मूल्य : ₹ 150.00 इस अंक का : ₹ 16.00

-: विनती :-



किस बिधि रीझत हौ प्रभू, का कहि टेरूँ नाथ।
लहर मेहर जबहीं करौ, तबहीं होउँ सनाथ॥1॥
तुम ठाकुर त्रैलोक-पति, ये ठग बस करि देहु।
दयादास आधीन की, यह विनती सुनि लेहु॥2॥
नहिं संजम नहिं साधना, नहिं तीरथव्रत दान।
मात-भरोसे रहत है, ज्यों बालक नादान॥3॥
कब को टेरत दीन मो, सुनौ न नाथ पुकार।
की सरवन ऊँचो सुनो, की दीन्हों बिरद बिसार॥4॥
बड़े-बड़े पापी अधम, तरत लगी ना बार।
पूँजी लगी कछु नन्द की, हे प्रभु हमरी बार॥5॥



— भक्तिमती दया बाई

अमृत बिन्दु **(गुरु पूर्णिमा पर विशेष)**

गुरु और शिष्य

— परमपूज्य गुरु

दो रास्ते हैं मालिक तक पहुँचने के लिये। एक यह कि सीधा उसी से सम्बन्ध पैदा करें और तप और समाधि का सहारा लें। मगर यह इतना आसान नहीं है, सबके लिए संभव भी नहीं है। दूसरा जरिया है कि उनके साथ सुहबत बनाओ जो अल्लाह (ईश्वर) के साथ सुहबत रखते हैं। इसका अर्थ है कि प्रभु की उपासना तुम्हें न नसीब हुयी तो भक्तों के सत्संग में बैठो, सद्गुरु का दामन पकड़ो।

शिष्य विचारा स्थूल में कैद है, उसके मन, बुद्धि और दृष्टि सब ही स्थूल हैं, इसलिए सूक्ष्म तक पहुँचना उसके लिए कठिन है, फिर महान सूक्ष्म परमात्मा तक तो अपने को ले जाना और उससे सम्बंध जोड़कर फैज हासिल करना और भी कठिन है, इसलिए बीच में अपने पीर (गुरु) को ले लें क्योंकि वह दोनों ओर का मिला हुआ प्राणी है। वह स्थूल मंडलों में रहता हुआ और हमारी तरह सारे व्यवहार करता हुआ भी वह ऊँचे सूक्ष्म मंडलों में और धुर तक सम्बंध रखता है और वहाँ चढ़ता उतरता रहता है। इसलिये उसके जरिये फैज हासिल करें तो काम जल्दी बनता है।

पीर या गुरु हर कोई नहीं है, जो अपनी सारी वासनाओं को मेट चुका हो, जो उसकी मर्जी में नेस्त (अस्तित्वहीन) हो गया हो जिसके आचरण में कोई भी काम धर्म के विरुद्ध न दिखाई दे, जो सच्चरित्रता और सदाचार का आदर्श हो औ समय उसमें लीन रहने से उसके अन्दर तद्रू आ गई हो, वह पीर या गुरु कहलाता है। ऐसो ढूँढ़ के नाता जोड़ना चाहिये। जिनमें यह गु दिखायी दें वह पीर हरगिज नहीं है, उनसे दूर में भलाई है।

शिष्य को उचित है कि गुरु में पूर्ण श्र और विश्वास रखे। विश्वास को कभी भूल भी डँवाडोल न होने दे। इससे शिष्य के अ एकदम मुहब्बत की आग भड़क उठती है जो ईश्वर को छोड़ के भीतर के तमाम कूड़े-कर को जलाकर खाक कर देती है।

अपने गुरु से इतना प्रेम करो कि हर स उसकी सूरत तुम्हारी आँखों में घूमती रहे, व भूलकर भी अश्रद्धा न आने दो, अश्रद्धा आते सारा किया कराया मिट्टी में मिल जाता है। व ऐसा ख्याल न करो कि गुरु को मेरी हालत खबर नहीं है। वह हमेशा शिष्य के ऊपर दृ रखता है। इस मुहब्बत को यहाँ तक बढ़ाओ खुदी मिट के गुरु के अस्तित्व में समा ज इसमें अहं का लोप हो जाता है और अपना रूप गुरु का रूप भासता है।

शिष्य को उचित है कि गुरु की सेवा से न मोड़े और तन, मन, धन से उसकी सेवा क परमार्थ की कमाई के लिए गुरु की मुहब

खिदमत और बाहर-भीतर के अदब का पालन करता रहे। उसकी रहन-सहन का जहाँ तक हो सके नकल उतारे और हरदम आज्ञाओं के पालन में तत्पर रहे।

वह अपनी इच्छाएँ गुरु की इच्छाओं में विलीन कर दे। दिल में कोई भी किसी प्रकार इच्छा न आने दे। जैसे गुरु चलावे वैसे ही चले। अपने को उसके हाथ में सौंप दे और फना हो जाये अर्थात् मर मिटे।

मुरीद (जिज्ञासु) भी सच्चा वही है जिसके अन्दर तड़प हो, पक्के इरादे वाला हो, जिसके दिल में सिवा उस प्रभु के और किसी वस्तु की चाहना न हो। जो गुरु का आज्ञाकारी हो और सब तरफ से निराश होकर गुरु के आसरे पड़ा हो। गुरु की मुहब्बत इस कदर उसमें असर कर गई हो कि हरदम हाजिर और गायब उसी की सूरत देखता रहे। उसकी खुशी में अपनी खुशी समझे।

शिष्य को उचित है कि जैसे भी बने अधिक से अधिक गुरु की खिदमत में पहुँचने की कोशिश करता रहे। इससे उसे इतना लाभ मिलेगा जो कठिन तप के द्वारा भी संभव है न मिल सके। बीच-बीच में दर्शन अवश्य करता रहे। ऐसे हर तीसरे महीने गुरु दर्शन करना लाजमी है, मगर किसी कारणवश न हो सका तो साल में एक बेर तो गुरु के समीप अवश्य ही पहुँचना चाहिये। जो किसी मजबूरी से या आलस्य या लोभ से साल में भी नहीं पहुँच पाते तो या तो जहाँ के तहाँ खड़े रह जाते हैं या नीचे की ओर खिसक पड़ते हैं। उनके न तो विकार दूर हो सकते हैं, और न यह विद्या ही मिल सकती है।

गुरु जब बात करने की आज्ञा दें तो बात करो, और जब चुप हों तो तुम भी खामोशी से बैठे रहो, परन्तु चित्त उधर ही रखो। खामोशी बात करने से भी अच्छी होती है। इसमें अधिक लाभ मिलता है। यह जरूरी नहीं कि जिस समय वह बात कर रहे हों तभी तक वहाँ बैठो, फिर उठ के चल दो। वह खामोश बैठें तो तुम भी खामोशी और अदब से वहाँ बैठ जाओ।

जो महापुरुष हुजूरी (उपासना) की हालत में बैठे हों उन्हें छेड़ना या उनसे बातें करना अच्छा नहीं होता। इससे उन्हें ठेस लगती है। उनका दिल परेशान हो जाता है। तुमने उनका आनन्द छीन लिया, प्रेमी को प्रेमपात्र से जुदा कर दिया, यह बहुत बड़ा पाप तुम्हारे लिये हो जायेगा। चाहे मुहब्बत (सद्व्यवहार) से वह तुमसे कुछ न कहें, परन्तु दिल में असहनीय दुःख अवश्य होगा। इसलिये कर्त्तव्य यह है कि या तो वहाँ से हट जाना चाहिये या खामोशी से बैठ जाना चाहिये।

अगर किसी दूसरे महापुरुष के सत्संग में तुम्हें आनन्द मिले तो तुम उसे अपने गुरु की तरफ से आया हुआ ख्याल करो। जो कुछ भी जहाँ से भी मिले उसे अपने पीर की तरफ से आया हुआ ख्याल करो। पीर मुरीद की हर हालत की खबर रखता है।

गुरु के सम्मुख या दूसरे महापुरुष के सत्संग में बैठ के पुस्तक पढ़ना, जाप करना अथवा कोई क्रिया करना दोष है। उस समय सारी तवज्जह (ध्यान) गुरु की ओर ही रहना चाहिये ताकि उससे निस्बत (संबंध) मजबूत हो सके। जाप इत्यादि कर्म सम्बंध जोड़ने, और उनकी प्रेममयी

धारों को अपने अन्दर धारण करने के लिये ही किये जाते हैं, सो वह गुरु की संगति में सहज ही प्राप्त होती है।

कभी-कभी शैतान धोखा देता है और उसे गुमराह करने के लिये उसके अन्दर गुरु के प्रति अविश्वास और अश्रद्धा पैदा करता है। गुरु की ओर से चित्त हट जाता है। कोई-कोई इस दशा में साधन छोड़ बैठता है। यदि दुर्भाग्य से ऐसा होता दिखायी दे तो मन को समझावे, उसे प्रथम ठिकाने पर लाने का प्रयास करे और वश न चले तो दौड़ के गुरु के पास जाना चाहिये।

जैसे बालकों को जल्दी-जल्दी भूख लगती है, वह कई बार खाते और दूध पीते रहते हैं और बड़े होने पर एक बेर में ही तृप्ति दिन भर की या कई घंटों की कर लेते हैं, उसी तरह नये साधकों को जल्द-जल्द रुहानी खुराक की जरूरत महसूस होती है और जितने पुराने होते जाते हैं वह बहुत काल तक के लिये एक बेर में ले सकते हैं। उनके लिये यह नियम नहीं है कि हर तीसरे मास अवश्य मिलें। जब क्षुधा सतावे और निर्बलता आवे तभी दौड़ के वहाँ जाना उचित है। ऐसे ऊँचे साधक कई वर्षों तक गुरु के समीप न पहुँचें तो भी उनकी हानि नहीं होती। जिन लोगों ने साधना के द्वारा अपने को कुछ शक्तिशाली बना लिया है उन्हें स्थूल शरीर से गुरु के पास जाने की जरूरत नहीं पड़ती, वे अपनी संकल्प शक्ति और विचार शक्ति के द्वारा अपने सूक्ष्म शरीर का गुरु से मिलाप करा लेते हैं और उनकी चुम्बकीय शक्ति को अपने में खींचकर भर लेते हैं, अन्यथा नीचे खिसकने का भय रहता है। ऐसे ऋषियों ने वर्ष में एक तिथि ही गुरु पूर्णिमा के नाम से बना दी उस दिन शिष्य को गुरु सेवा में अवश्य उपस्थित हो उन्हें साक्षात् ईश्वर मानकर उ पूजन-वंदन करना चाहिये।

अध्यात्म की चढ़ाई पर्वत शिखर तरह है। जीव नीचे खड़ा है और गुरु की अ शक्ति की कशिश से वह ऊपर चढ़ता है। कशिश ढीली पड़ जाती है तब या तो वह खिसकेगा या अगर वह अपने को साध सक वहीं रुका रहेगा, ऊपर तो किसी भी हाल में न सकेगा। इसलिए साधक का फर्ज है जल्दी-जल्दी गुरु के समीप पहुँचकर उस आकर्षण शक्ति को अपने अन्दर भरता रहे

शिष्य के लिये गुरु सेवा लाजिमी है। छल-छिद्र रहित भाव सहित कोई किसी की करता है तो ऐसे सेवक की ओर सबका खिंच जाता है। अहं को तोड़ने व खुदी को करने के लिये ही साधना है। इसलिये दोनों परस्पर सेवाव्रती बनना लाजिमी है। सेवा से पैदा होता है। सेवा से, नम्रता से और आज्ञ चलने से ही पात्र और अपात्र की पहचान होत और ऐसा मनुष्य ही उनकी दृष्टि में अधिक समझा जाता है। निष्काम सेवा से प्रेम पैदा है और आगे चल के इतनी घनिष्ठता कर देत कि दोनों गुरु शिष्य एक जान दो कालिब हो हैं। या तो गुरु शिष्य में प्रवेश हो उसमें समा ज है या शिष्य को अपनी आकर्षण शक्ति से ख के अपने अंदर ले लेता है। उस समय शिष्य अहं गुरु में लीन हो जाता है।

सम्पादकीय

वृत्ति

सन् 1960 की बात है, परम पूज्य पण्डितजी महाराज बड़ोदा, बम्बई, पूना, धारवाड़ होते हुये हैदराबाद जा रहे थे तो धारवाड़ विश्वविद्यालय के एक प्रोफेसर के आग्रह पर धारवाड़ रुके। सत्संग का आयोजन हुआ। धारवाड़ विश्वविद्यालय में प्रोग्राम रखा गया। ज्यादा लोग नहीं थे। वहाँ के प्रोफेसर और विश्वविद्यालय में कार्य करने वाले कुछ ही लोग इकट्ठा हुये। मेरा भी सौभाग्य था कि मैं उस यात्रा में परम भागवत के साथ था। शाम का सत्संग हुआ। सब लोग बहुत प्रसन्न थे। सत्संग के बाद एक प्रोफेसर साहब आये उन्होंने अपनी जिज्ञासा रखी कि "मैं यहाँ संस्कृत विभाग का अध्यक्ष हूँ और मैं दर्शन भी पढ़ाता हूँ। मैं आजकल पतञ्जलि योग दर्शन पढ़ा रहा हूँ। मैं उनको यह सूत्र समझा रहा हूँ– **'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'** अर्थात चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है। लेकिन आज मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या चित्त की वृत्ति का निरोध सम्भव है? चित्त कभी शान्त होता ही नहीं, हर पल उसमें वृत्तियाँ उठती रहती हैं।" परम पूज्य पण्डितजी महाराज ने कहा "हाँ भाई! यह पूर्णतः सम्भव है ।" "कैसे?" उन प्रोफेसर ने पूछा। पण्डितजी महाराज ने कहा इस समय ध्यान हो चुका है और रात्रि भी हो गई है। कल प्रातः काल सात बजे हम ध्यान में बैठेंगे। आप कल आ जायें। प्रोफेसर साहब दूसरे दिन ठीक सात बजे वहाँ आ गये। हम भी उत्सुकता लेकर बैठे थे कि आज क्या होता है? पण्डितजी महाराज ने हम सभी को ध्यान में बिठाया। आँखें बन्द हुईं। धीरे-धीरे शान्ति छा गई। मन शान्त हुआ, बुद्धि शान्त हुई। कहीं कोई विचार नहीं पूर्ण शान्ति। बीस-पच्चीस मिनट तक यह अवस्था रही। पूर्ण शान्ति व्याप्त रही। तब पूज्य पण्डितजी महाराज ने कहा–"बस अब ध्यान बंद करें।" ध्यान समाप्त हुआ। परम भागवत ने प्रोफेसर साहब से कहा कि "अब आप विचार लाने का प्रयास करें।" प्रोफेसर ने पूज्य पण्डितजी महाराज के चरणों में प्रणिपात होते हुये कहा, "आज मैंने जाना कि चित्त की वृत्ति का निरोध हो सकता है। ध्यान के दौरान मेरे मन में न कोई प्रश्न था न कोई विचार। मेरा मन पूर्ण शान्त था।"

चित्त क्या है? वृत्ति क्या है? निरोध से क्या होता है? योग से क्या लाभ होता है? अध्यात्म के रास्ते में चलने वालों के सामने अनेकों ऐसे प्रश्न आते हैं। चित्त वास्तव में वह स्थान है जहाँ परमात्मा भी है और संसार भी है। शास्त्रों ने कहा है कि चित्त एक ऐसी इन्द्रिय है जो आत्मतत्व से भी मिली है तथा प्रकृतितत्व से भी। जीव के निर्माण में चित्त पहला आवरण है आत्मा के

ऊपर। इसके बाद बुद्धि का आवरण आता है और उसके ऊपर मन का आवरण का निर्माण हुआ। अब हम चित्त के कार्य को समझें। चित्त का यह गुण है कि हलका सा स्पन्दन इसमें हलचल मचा देता है। चित्त के सामने जो भी वस्तु आती है, उसका बिम्ब इस पर पड़ता है और उस बिम्ब के अनुसार ही वह अपना स्वरूप धारण कर लेता है। उस बिम्ब के तदाकार हो जाता है। वृत्ति एक लहर है। वह विचार का पूर्ण स्वरूप है। यह वृत्ति ही विचार को जन्म देती है। उसका उद्‌गम स्थान है चित्त। चित्त एक सरोवर समान है जहाँ हर समय वृत्ति की लहरें उठा करती हैं। चित्त एवं वृत्ति को इस उदाहरण से समझें। आप प्रात: काल किसी सरोवर के किनारे जायें। शान्त वातावरण, सरोवर में कोई हलचल नहीं। कोई लहरें नहीं। सब बिल्कुल शान्त। सरोवर के किनारे जो वृक्ष, पहाड़ उसका प्रतिबिम्ब जल में स्पष्ट दिखलाई देता है। अब हवा चलने लगे या आप सरोवर में एक कंकड़ डाल दें। सरोवर में बना दृश्य टूट जायेगा। जो दृश्य आप देख रहे थे वह आपको दिखलाई नहीं देगा। ऐसे ही जब मेरे चित्त में कोई वृत्ति नहीं होती वह बिल्कुल शान्त होता है। हमारे अन्तर में उपस्थित आत्मा का प्रतिबिन्ब उसके चित्त में पड़ता है। आत्मा की सन्तुष्टि होती रहती है। उसकी प्यास मिट जाती है। हमने देखा था कि सरोवर में बना दृश्य कंकड़ डालने से गायब हो जाता है उसी तरह चित्त में यदि कोई वृत्ति बन जाती है तो वहाँ से परमात्मा का बिम्ब हट जाता है और संसार आ जाता है। जब तक परमात्मा का बिम्ब था तब तक शान्ति थी, सन्तुष्टि थी। लेकिन उसके हटते ही अशान्ति व्याप्त हो जाती

है। अब प्रश्न उठता है चित्त में वृत्ति उठती
है? वृत्ति के उठने का एक मात्र कारण है चित्त
आया क्षोभ है। आत्मा चिन्मय, शान्त
निर्विचार है। अब प्रश्न उठता है आखिर यह क्ष
उठा कैसे? इसको जानने के लिये जीव
निर्माण में जाना होगा। शास्त्र कहते हैं
परमात्मा सत् है, चित् है, आनन्द घन है।
परमात्मा का विचार आया कि 'एकाकी न रम
अर्थात 'मैं अकेला न रहूँ।' अकेले में आन
नहीं है। इस विचार ने एक दूसरे विचार को ज
दिया 'एकोऽहं बहुस्याम्' अर्थात एक से अने
हो जाऊँ। उसी परमात्मा से एक धार निक
जिसे प्रकृति कहते हैं। वही परमात्मा प्रकृति
संयोग से अनेकों रूपों में एवं प्रकृति के गुणों
अपने को आबद्ध कर एक जगत की सृष्टि कर
है। प्रकृति में तम् है, अज्ञान है। आत्मा प्रकृति
संपर्क में आती है तो आत्मा का सत् एवं प्रकृ
का तम् मिलकर रज की उत्पत्ति होती है। रज
क्रिया है। यह रज ही चित्त में क्षोभ उत्पन्न होने
कारण है। चित्त में वृत्ति नहीं थी तब बुद्धि
बिम्ब चित्त पर पड़ता तो बुद्धि आत्मा का निर्म
स्वरूप चित्त में देखती तो प्रसन्न होती, सन्तु
होती। परन्तु जैसे शान्त सरोवर में हम क
कंकड़ या पत्थर डाल देते हैं तो उसमें लहरें ब
जाती हैं। ऐसे ही इस आत्मा और प्रकृति जनि
रज से हमारे चित्त में क्षोभ होता है और वृ
उत्पन्न होती है। यह वृत्ति ही विचार को जन्म दे
है। रज के कारण हर तत्व क्रियाशील हो गय
आत्मा के ऊपर जब प्रकृति के आकाश, वा
अग्नि, जल एवं पृथ्वी तत्वों से जीव का स्थू
नवनिर्माण हो जाता है तो इस स्थूल स्वरूप

बिम्ब चित्त पर पड़ता है। बुद्धि उसे स्मृति में संजोकर निर्णय देती है कि यही मेरा स्वरूप है। यहाँ से अस्मिता का निर्माण होता है। आगे इस अस्मिता में राग-द्वेष तथा मृत्यु भय आ जाते हैं। यह सारा निर्माण चित्त की क्रिया से ही बना । अतः हम देखते हैं कि चित्त में उत्पन्न हर क्षोभ अर्थात वृत्ति बुद्धि के पास जाती है। बुद्धि अपने स्मृति कोष से मिलान कर उसका नाम व रूप तथा परिणाम देखकर अहं के पास भेज देती है । अहम् उसे कार्य सम्पादन करने के लिये मन के पास भेज देता है। मन रसिक है। अतः वह इन्द्रियों से कार्य सम्पादित करा लेता है। इसके कारण कर्म बन गया। अब मैं कर्म करता हूँ। कर्म से संस्कार बनते हैं। यह संस्कार मेरे जन्म मृत्यु के कारण बन गये। एक संसार बस गया मेरे चारों ओर। यह पंचक्लेश-अविद्या, अस्मिता, राग-द्वेष वह अभिनिवेश की अनुभूति होने लगती है। एक नवनिर्माण आत्मा पर हो गया। इस कारण आत्मा को सहज अवस्था की अनुभूति होना समाप्त हो गया। कैसे मैं अपने निजस्वरूप की अनुभूति वापस पाऊँ? हम देखते हैं अगर चित्त में कोई क्षोभ न हो तो वहाँ वृत्ति नहीं बनेगी। यदि हम इस वृत्ति पर ही संयम कर लें तो विचार उत्पन्न नहीं होगा। कोई कामना नहीं बनेगी। अन्तर में शान्ति रहेगी और शान्ति में हमें वास्तविक स्वरूप अर्थात् परमात्मा का बोध होगा। इसलिये महर्षि पातञ्जलि लिखते हैं— **'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'** अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध ही परमात्मा से योग है। पर यह हो कैसे? महर्षि उपाय लिखते हैं—**'वीतराग विषयं वा चित्तम्'**। अर्थात् किसी वीतराग पुरुष के चित्त से अपना चित्त मिला दो तो तुम्हारा चित्त भी शान्त हो जायेगा। भगवान कृष्ण भी इसी सिद्धान्त को मानते हैं, अतः वे अर्जुन से कहते हैं **'मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु'** अर्थात तू मेरे मन वाला हो जा। अपने मन को मेरे मन से मिला दे। अपनी बुद्धि को मेरी बुद्धि से जोड़ दे। अपने अहम् को मेरे अहम् से जोड़ दे। अर्थात् **मुझे अपने में बसा ले**। मेरा चित्त शान्त है। जब तू मुझे बसा लेगा तो तेरा भी चित्त शान्त हो जायेगा। पर आप कितना भी प्रयास कर लें, आप अपने प्रयास से अपने मन को गुरु के मन से, अपनी बुद्धि से, अपने अहम् को गुरु के अहम् से जोड़ नहीं सकते। हमारे गुरु महाराज ने कहा गुरु को अपने से जोड़ना तुम्हारा काम नहीं है। यह गुरु का काम है। उन्होंने एक सरलतम विधि दी उस अवस्था में जाने की, जिसके द्वारा हम गुरु से जुड़ जायें। हमारी साधना में होता क्या है? जैसे-जैसे हम साधना करते जायेंगे गुरु मेरे मन में भरेगा, मेरी बुद्धि में भरेगा, मेरे अहम् में भरेगा। मेरे मन एवं बुद्धि के विकार दूर होंगे। गुरु सारे विकार छाँट देते हैं। गुरु के प्रति मेरी श्रद्धा और विश्वास बढ़ता है। धीरे-धीरे मेरा मन शान्त होता है, मेरी बुद्धि शान्त होती है। मेरा अहम् शान्त होता है। एक अजीब सा आनन्द एवं पूर्ण शान्ति की अवस्था में चला जाता हूँ। मेरा सारा स्वरूप बदल गया। अपने में और सबमें वही परमात्मा का दर्शन होने लगा। अब किसी के लिये न राग रहा, न द्वेष, न घृणा। सबसे प्रेम हो गया। मेरा योग हो गया परमात्मा से। जीवन का स्वरूप बदल गया। ✦✦

प्रवचन पराग–

शिष्य का कर्त्तव्य

— परम भागवत परमसंत पं० मिहीलाल

देखने में आता है कि प्रत्येक शिष्य अपने गुरु को चाहता है, उनकी सेवा करता है, उन पर सब कुछ न्योछावर करता है तथा अपना प्राण तक भी देने को तैयार हो जाता है। पर ऐसे शिष्य कम ही मिलेंगे, जो गुरु चाहते हों और वही करते हों। प्रत्येक शिष्य की यह इच्छा होती है कि जैसा मैं कहूँ वैसा ही हो, वही मेरे गुरु करें। वह अपनी इच्छा अनुसार ही गुरु को चलाना चाहते हैं। अगर गुरु जरा भी इधर-उधर होना चाहते हैं तो वे इसे पसन्द नहीं करते। यह क्या है? रामायण में आप देखें कि बहुत से भक्तों का जिक्र आया है, लेकिन उनमें ज्यादातर भक्त ऐसे हैं, जो अपने लिए ही चाहते हैं। उनमें से बहुत थोड़े से ऐसे भक्त निकले हैं, जो भगवान को चाहते हैं और वह वही करता है। उनकी इच्छा पर चलने वाले बहुत ही कम हैं। सीताजी से भगवान राम ने कितनी बार कहा कि तुम वन मत जाओ। पति की आज्ञा मानना पत्नि का धर्म है पर उन्होंने कहा कि यह नहीं हो सकता, मैं तो आपके साथ ही चलूँगी। भगवान ने यहाँ तक कहा कि तुम हमारी बात नहीं मानोगी तो आगे चलकर इसका फल भी भोगोगी। फिर भी उन्होंने नहीं माना। वह अपने ही हठ पर अड़ी रहीं। अन्त में, उसका परिणाम वैसा ही हुआ! अनेक दु:खों में वह फँसी। एक भक्त भरत हैं। आप उनके जीवन पर निगाह डालें कि वे कैसे भक्त हैं। राम, माता-पिता की आज्ञा से वन चले। उन्होंने उनकी आज्ञा मानी, इसलिए वे अति महान हैं। भरत से कहा गया कि तुम राज्य कर[े] माता कैकई और कौशिल्या ने भी कहा कि त[ु] राज्य करो। गुरु वशिष्ठ ने भी यही कहा पर भर[त] ने इसे स्वीकार नहीं किया। आप देखें कि इस[में] कितना विरोधाभास मालूम पड़ता है। एक माता-पिता की आज्ञा का पालन किया, इस वा[स्ते] उन्हें बड़ा माना गया और एक ने उनकी आज्ञ[ा] नहीं मानी, फिर भी वे बड़े हैं। यह क्या बात है मनुष्य के अन्दर जो निर्मल बुद्धि है, जिसे ह[म] विवेक कहते हैं, इसकी जागृति होने से मनुष्य य[ह] सोचता है कि हमारा कल्याण किसमें है? भर[त] यह जानते हैं कि यह राज्य हमारा नहीं है, इस प[र] मेरा हक नहीं है, यह तो भगवान का राज्य है औ[र] उन्हें ही किसी तरह बुलाकर दिया जाये। आज्ञ[ा] को नहीं मान करके भी भरत वन गये। भगवा[न] राम से मिले, उनसे प्रार्थना की, वे किसी प्रका[र] चलें, पर अन्त में उन्होंने कहा कि जो आप कहें वही मैं करूँगा। आप जो आज्ञा देंगे, वह ह[में] शिरोधार्य है। इस कारण भरत का जीवन पवि[त्र] माना गया है। भरत ने अपने स्वामी की आज्ञा क[ा] पालन किया। वे स्वामी के रुख पर चले, अप[नी] पर नहीं। इसलिए साधना यह बतलाती है कि ह[म] अपने गुरु के रुख पर चलें। वे जो चाहते हों, व[ह] काम हमें करने हैं, जिससे हमारा प्यारा प्रसन्न रह[े] वही हमारा कर्त्तव्य है।

एक गुरु के कई शिष्य थे। वे सबों से प्रे[म] करते थे। पर शिष्यगण आपस में द्वेष रखते थे

एक दिन एक शिष्य को बुलाकर उन्होंने कहा कि हम तुमको बहुत प्यार करते हैं, तुम हमारे प्रिय हो, हम चाहते हैं कि तुम हमारा काम करो, हमारी गद्दी सम्भालो, अब तुम बताओ कि तुम्हारे दिल में क्या है? उस शिष्य ने कहा-महाराज, ऐसे तो आपके सभी शिष्य हैं, लेकिन फलाँ-फलाँ बहुत बिगाड़ कर रहे हैं, आप उनको हटा दीजिए। उन्होंने कहा कि ठीक है। इसी तरह दूसरे शिष्य को बुलाकर उन्होंने यह कहा, पर उसने भी ऐसा ही कहा। अन्त में उन्होंने तीसरे शिष्य से पूछा कि हम तुम्हें चाहते हैं, तुम हमारा काम सम्भाल सकोगे। उसने कहा-जैसी आपकी आज्ञा होगी, हम करेंगे, सिर्फ आप हम पर कृपा करते रहें। पूछने पर शिष्य ने कहा कि भगवम्! सिर्फ यही कृपा कीजिए कि मेरे अन्दर राग-द्वेष पैदा न हों तथा अहंकार न आवे। मेरे घर यदि ये चीजें आईं तो मैं आपका कार्य नहीं कर पाऊँगा। उन्होंने कहा-तुम वास्तव में हमारा काम कर सकते हो। यह कथा हमें बताती है कि जो मनुष्य परमात्मा की आज्ञा से परमात्मा को प्रसन्न करने के लिए संसार का कार्य करता है, वही वास्तव में मनुष्य है और भगवान उससे प्रसन्न रहते हैं। अगर आपसे कोई द्वेष करता हो तो आप उससे प्रेम करें। अगर कोई चोरी करता है और आप उसे देख लेते हैं तो ईश्वर के नाम पर आप नजर बचालें। जीवन में इन चीजों को लाना है। संसार में ज्ञानी भी हैं और अज्ञानी भी। जैसा कि एक अच्छे मकान या मन्दिर में शीशे लगे हों और उसमें एक-सा बिम्ब दिखाई पड़ता हो, और उसमें कोई बालक चला जाये तो वह अपना ही एक-सा बिम्ब देखकर चकित होगा कि उसके इतने बिम्ब कैसे हो गये? अगर उसमें एक कुत्ता चला जाये तो वह अपने अनेकों बिम्ब देखकर लड़ता-लड़ता घबड़ा जायेगा। पर यदि उसमें कोई समझदार मनुष्य चला जाये तो अपने बिम्ब को देखकर कहेगा कि ये सारे बिम्ब मेरे ही हैं, क्योंकि उसको ज्ञान है। इसलिए जब मनुष्य को आत्म-ज्ञान पैदा हो जाता है तो उसे सारी मूर्ति में भगवान ही दिखाई पड़ता है। वह किसी से राग-द्वेष नहीं करता। यदि कोई उससे द्वेष भी करता है तो वह उसे क्षमा कर देता है, क्योंकि पिता समझता है कि वह जानता ही नहीं। आत्म-ज्ञान आये बिना मनुष्य में ये गुण नहीं आते। कोई कड़े शब्द कह जाये और उसके बदले आप मीठे शब्द बोलें, तो समझ लो कि आप महान पुरुष हैं। यह काम कठिन है। यह काम शिवजी का है, जो विष पीकर भी अच्छे शब्द बोलते हैं। यदि आपके अन्दर अमृत है, तो वही जिह्वा से होकर बाहर निकल जायेगा तथा और तेजी से निकलेगा। मातायें और बहनें, अपने घर की बड़ी-बूढ़ियों, माताओं, बच्चों और पतियों से यदि मीठे शब्द बोलना शुरु कर दें तो उनका घर स्वर्ग हो जायेगा। मीठी बोली से घर पवित्र हो जाता है। आप जानते हैं कि पक्षियों के मीठे शब्द सुनने के लिए मनुष्य तड़पता है। हमारी बोली से किसी को दु:ख हो तो मनुष्य जैसा व्यवहार नहीं हुआ। हमारे साथ यदि कोई अभद्र व्यवहार करता है और हम उसके साथ भद्र व्यवहार करते हैं तो समझो कि हम महात्मा का काम कर रहे हैं। यह हमारी साधना के द्वारा जीवन में यदि आ जाये तो समझो हमारी साधना सफल हुई, नहीं तो समझना कि सत्संग का ज्यादा प्रभाव नहीं हुआ।

✦✦

सुधा-सार :-

सामूहिक साधना

—नवनीत हृदय परम संत डा० बृजेन्द्र कुमार जी

थोड़ा-सा इस बात पर विचार करें कि यह जो भंडारा बड़े-बड़े सामूहिक सत्संगों का जगह-जगह पर आयोजन किया जाता है, इससे हमको क्या फायदा है? इतना पैसा खर्च करके व शारीरिक कष्ट उठाकर जो लोग इसमें पहुँचते हैं, उसके बदले क्या मिलता है? क्या हम अपने घर बैठकर ही भगवान का भजन-पूजन करके वही फायदा नहीं उठा सकते?

हम कैसे हैं, हमारा जीवन कैसा है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि हमारे विचार कैसे हैं। अगर विचार अच्छे हैं तो हम अच्छे हैं, अगर विचार बुरे हैं तो हम बुरे हैं। अच्छे विचार मनुष्य का जीवन बदल देते हैं। उसका जीवन सादा-सच्चा और मनुष्य मात्र के लिए सहृदयता लिए होता है।

विचार और भगवान के भजन में भी थोड़ा सम्बन्ध है। अगर विचार अच्छे हैं तो अंतर में भगवान की उपासना या आराधना की प्रेरणा मिलेगी और अगर हम भगवान का भजन करते हैं तो स्वत: ही विचार भी अच्छे होते जाते हैं, इस तरह से भगवान का भजन और अच्छे विचार एक-दूसरे के पूरक हैं।

डॉ० एनीवेसेन्ट ने लिखा है कि अगर तुम को अच्छा बनना है तो हर समय अच्छे विचारों का मनन करो, अपने विचारों का मन्थन करो, उनमे अच्छे विचारों को ग्रहण करो और बुरों को निकाल फेंको, यह प्रयास तब तक करते रहो जब तक कि तुम्हारे समस्त विचार पूर्णत: शुद्ध न हो जाएँ। उन्होंने यह भी लिखा है कि विचार एक संक्रामक रोग की तरह हैं जो बहुत ही जल्दी दूसरों पर असर करते हैं।

आप सब लोग जानते हैं कि संक्रामक रोग से बचने के लिए दो ही तरीके हैं-या तो वह जगह जहाँ रोग फैला है, छोड़कर भाग जाओ, दूसरा यह कि रोग-निरोधक टीका लगवा लो। यह टीका तुम्हारे अन्दर प्रतिरोधी शक्ति पैदा कर देगा जिसके कारण रोग के इलाके में रहते हुए भी या तो रोग असर नहीं करेगा और रोग हो भी गया तो इस टीका की वजह से ज्यादा नुकसान नहीं पहुँचा पायेगा। इसी तरह परमार्थ में या तो हम उस माहौल को छोड़कर हिमालय की कन्दराओं में या कहीं जंगल में चले जाएँ किन्तु गृहस्थ के लिए यह ठीक नहीं पड़ता। दूसरे, कोई ऐसी विधि हो जो टीके का काम करे। भण्डारे एक तरह से टीके का ही काम करते हैं। यह हम में एक ऐसी शक्ति भर देते हैं कि या तो बुरे विचार असर नहीं करते और अगर किसी जबरदस्त धक्के से बह भी जाय तो जल्द तैरकर किनारे आ लगते हैं।

दूसरा कारण—घर पर हम जो साधना करते हैं वह एक व्यक्तिगत प्रयास है। खान-पान, वातावरण व संगति का असर पड़ता है। इसके प्रभाव में आकर साधक कभी-कभी बहक जाता है। वह तभी सफलीभूत हो सकता है जबकि वह अपने को पूर्णतः गुरु के समर्पण कर दे, जो जरा मुश्किल काम है। इससे पहले साधक के लिए यही कल्याणकारी है कि वह ऐसे उत्सवों में कम-से-कम साल में दो-तीन मरतवा भण्डारा में शामिल होता रहे जहाँ उसकी साधना को बल मिलता है क्योंकि ऐसे अवसरों पर सामूहिक प्रयास या प्रार्थना होने की वजह से भगवान की दया का भण्डार खुल जाता है और सभी पर विशेष कृपा होती है। ✦✦

साधन का तात्पर्य

साधन से केवल मन की चंचल अवस्था को दूर करना ही अभिप्राय होता है। ब्रह्मविद्या उससे आगे चलके आरम्भ होती है। बीज बोने से पूर्व भूमि को जैसे किसान तैयार करता है। पीछे उसमें बीज डालता है, वैसे ही मन को 'निर्विषय' बना लेना आत्म विद्या की भूमिका है। 'निर्विषय' होना मन को विचारों से खाली करना है। जिस समय मन में कोई भी विचार बाकी नहीं रहेगा तब वह निर्विषय होगा, इसी को 'ध्यान' की अवस्था कहते हैं। इस 'ध्यान' तक पहुँचने के लिए धारणा का दृढ़ करना आवश्यक होता है। धारणा के साधन में अनेक विचारों को त्याग के एक विचार लेना होता है और उसी पर दृष्टि जमानी पड़ती है। यह एक विचार अपनी रुचि के अनुसार मनुष्य को छाँट लेना चाहिए। स्थूल बुद्धि वालों को स्थूल रूप लेना पड़ता है। इसी का अभ्यास जब आदमी करने बैठता है तो थोड़ी देर के लिए वह ऐसा बन जाता है कि उसे वह एक ही वस्तु दिखायी देती है। दूसरे विचार उसके चित्त से लुप्त हो जाते हैं, वह उसमें डूब जाता है, इसी को 'अपरिग्रह' कहते हैं।

आगे न अपना ख़्याल रहता है और न लक्ष्य का ध्यान रहता है। जिस एक रूप को पकड़ा था वह भी छिप जाता है। इसी अवस्था का नाम 'निर्विषय' होना है; यही 'एकाग्रता' है। इस एकाग्रता की नींव पर ब्रह्म विद्या की भीति खड़ी की जाती है, यहीं से 'योग' विद्या आरम्भ होती है, अब तक जो था वह केवल मन को या अन्तःकरण को विकारों से शुद्ध करके योग साधना के लिए तैयार करना था। यह तैयारी चाहे स्थूल रूप को पकड़ के कर ली जाय या सूक्ष्म को, निराकार या साकार का कोई झगड़ा इसमें बाधा नहीं डालता, क्योंकि लक्ष्य भी हमारा कल्पित होता है, जब तक वह मिट न जाय, कल्पना का नाश नहीं होता। जिस तरह जल में एक तरङ्ग शेष रहने पर उसे निर्विषय नहीं कहेंगे। निर्विषय मन शून्य होता है फिर इसी शून्य में प्रकाश की किरण फूटती है और साधक अपने दिव्य चक्षु से अद्भुत तत्व दर्शन करता है, यही योग विद्या का आरम्भ है। इसलिए योग दर्शन लिखता है कि 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः' अर्थात् वृत्तियों के निरोध पर 'योग' होता है।

परमपूज्य गुरुदेव

सद्गुरु कृपा

— श्री सुभाष च

खोल दो गुरुवर हमारे, बंद घट के द्वार हैं।
द्वैत के भारी समर में, हम खड़े लाचार हैं।

मोह-ममता में फंसा हूँ, सूझता कुछ भी नहीं।
स्वार्थ के उठते थपेड़े, रोक पाता भी नहीं।
ढूँढ़ता हूँ मैं तिमिर में, हाथ कुछ आता नहीं।
वस्तु मिलती है जहाँ पर, मैं पहुँच पाता नहीं।

हे प्रभू हर लो हमारे जो भरे कुविचार हैं।
खोल दो गुरुवर हमारे, बंद घट के द्वार हैं।

सामने मन को लुभाने, विविध-सुख आंधी चली।
मैं सुखद जीवन बिताने, चल पड़ा था वह गली।
चाहतों में चल रहा था, सामने खाई पड़ी।
दिख रहा था मैं अकेला, पास परछाईं खड़ी।

आप के द्वारा पतित, होते रहे उद्धार हैं।
खोल दो गुरुवर हमारे बंद घट के द्वार हैं।

जीव की मिटती पिपासा, सद्गुरु की याद में।
शीघ्र बंधन-मुक्त होते, एक ही फरियाद में।
भाव शुचिता के भिगोओ, साधना के रंग में।
मार्ग मुक्ती का खुला है—चल पड़ो सत्संग में।

आप की महती कृपा, मेरे लिये उपहार हैं।
खोल दो गुरुवर हमारे बंद घट के द्वार हैं।

गुरु पूर्णिमा के पावन पर्व पर :

गुरु ही हैं हरि तेरे

— श्री गोपालकृष्ण मूर्ति

परम समर्थ गुरु महाराज जी ने मानव मात्र के लिए एक सरल साधना दी जिससे हम इसी जीवन में शांति एवं आनंद प्राप्त कर सकते हैं। उन्होंने महती कृपा कर साहित्य के माध्यम से ज्ञान के सागर को गागर में भर कर जन साधारण के लिए सुलभ कर दिया। परम पूज्य परमभागवत पंडित जी महाराज जी ने आजीवन अपने श्रीमुख से एवं साहित्य के माध्यम से श्रीगुरु की महिमा का गान किया। वर्तमान समय में भी हमारे परमपूज्य गुरुजन श्रीगुरु की महिमा का ही वर्णन करते हैं जब कभी यह प्रश्न सामने आता कि जीवन में गुरु भक्ति ही क्यों श्रेष्ठ है, तो उसके उत्तर में मन वो सारी बातें दोहराता है जिसे हमने उनके श्रीमुख से सुना और उनके द्वारा लिखित पुस्तकों में पढ़ा।

'अलौकिक भक्ति योग' पुस्तक में श्री गुरु महाराज जी ने कबीर साहब एवं उनकी शिष्या आमन देवी के वार्तालाप का वर्णन किया। आमन देवी के यह पूछने पर कि हे प्रभु हमें भक्ति किसकी करनी चाहिए। इस शंका का समाधान करने के लिए उन्होंने कहा कि आमन भक्ति दो प्रकार की होती है एक सकाम, दूसरी निष्काम। जो सेवा, पूजा एवं प्रेम कामनाओं के वशीभूत होकर की जाती है वह सकाम भक्ति कहलाती है। अतः आर्त, अर्थार्थी एवं जिज्ञासु तीनों ही सकाम भक्त कहलाते हैं तथा जो भक्ति कामनाओं से रहित हो उसे निष्काम भक्ति कहते हैं। ये निष्काम भक्त ही ज्ञानी भक्त कहलाते हैं और ये भक्त ही श्रेष्ठ होते हैं। इनके अंतर में परमात्मा से मिलन के अतिरिक्त कोई कामना नहीं होती। ये इसी मिलन के लिए छटपटाते हैं यह सम्पूर्ण मिलन ही जीव को आवागमन से मुक्त करता है।

आगे उन्होंने कहा कि माया के अन्दर रहने वाली प्रत्येक वस्तु नाशवान है और जो नाशवान है, उसके साथ सदा-सदा के लिए नहीं रह सकते। संसार में धन, दौलत वैभव, संतान इत्यादि तो बहुत शीघ्र साथ छोड़ देते हैं। देव लोक का सुख भी पुण्य क्षीण होने पर समाप्त हो जाता है और पुनः मर्त्य लोक आना पड़ता है। इंद्र और ब्रह्मा तो हमेशा ही बदलते रहते हैं, हाँ विष्णु और शिव में ठहराव है लेकिन कल्प के अंत यानी प्रलय स्थिति में ये भी लय हो जाते हैं। इसलिए इष्ट उसको बनाना चाहिए कि जो सदा एक रस रहे ओर जिससे हमारा कभी भी वियोग न हो।

आमन देवी ने पूछा प्रभु ऐसा अविनाशी पुरुष कौन है जो ब्रह्मा, विष्णु, महेश, ब्रह्म, परब्रह्म से

भी ऊँचा है, उसका नाम, रूप कैसा है? कृपया समझाइये। कबीर साहब बोले पुत्री वह नाम और रूप के परे है तब भी उसके अनंत नाम और अनंत रूप हैं। करोड़ों सूर्यों से भी अधिक तेज वाला, करोड़ों चंद्रमाओं से भी अधिक शीतलता वाला है, यह सूर्य उसी से प्रकाश को पाकर सबको प्रकाशित करता है, ब्रह्मा उसी से शक्ति लेकर रचना का कार्य करते हैं, विष्णु उसी से शक्ति लेकर सबका पालन करते हैं, शिव उसी से शक्ति लेकर संहार का कार्य करते हैं, वह आदि का भी आदि है और अंत का भी अंत। वह सीमाओं से रहित एवं अनंत है अतः पुनः आवागमन न भोगना पड़े इसलिए हमें उसे ही अपना इष्ट बनाना चाहिए। आमन देवी ने पुनः कहा जो नाम और रूप के परे हो, निराकार हो, उस अलख अगोचर की पूजा, ध्यान करना कैसे संभव है, क्योंकि ध्यान के लिए तो ध्येय आवश्यक है और ध्येय का कोई न कोई रूप होगा, हे प्रभु मेरी दुविधा दूर कीजिये और विस्तार में स्पष्ट कीजिए। कबीर साहब बोले–वेद उसको "प्रणव"–"ॐ" कहते हैं, उपनिषद ने उसे "उद्गीथ" कहा, सूफी उसे "हू" कहते हैं चूँकि वह शक्ति घट-घट में रमने वाली है इस कारण हमारे गुरु श्री रामानन्द जी महाराज जी ने उसे "राम" कहा, इसी तरह किसी ने उसे वासुदेव और कृष्ण कहा।

पुत्री वास्तव में अज्ञान के अन्धकार को मिटाकर ज्ञान रूपी प्रकाश देने वाला भी वही है इस कारण वह "गुरु" कहलाया। मनुष्य या आदम को सबसे प्रथम ज्ञान उसी से प्राप्त हु था। पश्चात उससे दूसरे को एवं आगे सिलसिला चलता गया। सृष्टि के आरम्भ से अ तक यह सिलसिला चल रहा है इस कारण व सबका "गुरु" है चूंकि सत्य के ज्ञान का सच दाता वही है इस कारण हमने उसे "सतगुर कहा। बस, ऐसे सतगुरु को ही अपना इष्ट बन चाहिए। गुरु "परमात्मा" का ही नाम है उसको किसी जीव पर दया आती है, वह उस मोह रूपी अज्ञान से पार करना चाहता है, किसी सत्पुरुष के द्वारा उसको उपदेश देता उसके हृदय में प्रेम और भक्ति उत्पन्न करता और इस तरह श्रद्धा और विश्वास पाकर प्रा मुक्त हो जाता है इसलिए मेरा मत यही है जिज्ञासु को सब कुछ त्याग कर गुरु की भ करना ही सबसे उत्तम और सरल साधन है य "संत मत" है।

परम समर्थ गुरु महाराज जी ने यह समझाया कि जड़ वस्तु का ध्यान हम में जड़ लाता है और चेतन का ध्यान हम में चैतन्य लाता है। सतगुरु का हम दर्शन करते हैं, उ बात करते हैं, अतः उनकी छबि हमारे आँखों आसानी से बस जाती है और उनके ध्यान में को किसी तरह की उलझन भी नहीं होती। पर हम साधारण जीव गुरु को भी अपने जैसा मनु ही समझने की भूल कर जाते हैं। हमारी प्रवृ ऐसी हो गयी है कि पत्थर के ईश्वर को तुरंत ईश्वर मान लेते हैं किन्तु नर रूप में ईश्वर आसानी से ईश्वर नहीं मान पाते इस का

कबीर साहब कहते हैं "गुरु को जो नर जानते, सो नर कहिये अंध"।

वर्तमान में हमारे परम पूज्य गुरुजन भी अपने प्रवचन एवं साहित्य के माध्यम से यह बताते हैं कि मनुष्य तन के सीमित दायरे में दिखने वाले "गुरु" किस तरह असीम और अनंत हैं। इसे उन्होंने एक उदाहरण से समझाया जैसे कि हम देखते हैं कि अत्यंत उच्च वोल्टेज की विद्युत शक्ति का हम दैनिक जीवन में कोई उपयोग नहीं कर सकते हैं इस कारण दैनिक जीवन में उपयोग के लिए ट्रांसफार्मर का प्रयोग कर अत्यंत उच्च वोल्टेज की विद्युत शक्ति को कम करके दैनिक जीवन में उपयोग के लायक बनाया जाता है यह ट्रांसफार्मर एक तरफ अत्यंत उच्च वोल्टेज की विद्युत शक्ति से जुड़े रहकर दूसरी तरफ से दैनिक जीवन में उपयोगी उपकरण को चलाता रहता है ठीक इसी तरह "गुरु" भी उस नाम और रूप के परे परम दिव्य शक्ति से जुड़े रहकर संसार को आवश्यकतानुसार ज्ञान रूपी प्रकाश एवं शान्ति देते रहते हैं। अत: गुरु का ध्यान ही ईश्वर का ध्यान है। सतगुरु उस अनंत ज्ञान, अपरिमित प्रकाश एवं चरम आनंद को सीमित कर हमें अपने सामर्थ्य के अनुसार प्रदान करते हैं। इस कारण "सतगुरु" ससीम दिखते हुए भी असीम होते हैं पूर्णत्व प्राप्ति के लिए गुरु भक्ति ही एक मात्र साधन है। गुरु ही वह आरंभिक तत्व है, जहाँ से अन्य तत्वों का अस्तित्व आरम्भ होता है। जिस तरह वातावरण में व्याप्त जल हमारी प्यास नहीं बुझा सकता, ठीक इसी तरह ब्रह्मांड में व्याप्त सत, चित, आनंद हमें तृप्त व पूर्ण नहीं कर सकता। "सतगुरु", सत, चित, आनंद का घनीभूत स्वरूप है। वह नर रूप में नारायण हैं। परमपूज्य परम भागवत पंडित जी महाराज ने ऐसे "सतगुरु" को "नराकार ईश्वर" कहा। वो कहते हैं–"भटके क्यों तू हरी दर्शन को, गुरु ही हैं हरि तेरे"।

वास्तव में शिष्य "प्रेम स्वरूप" गुरु प्रेम को जान ही नहीं पाता जैसे नन्हा बालक माँ के प्रेम, वत्सलता को जान नहीं सकता। आप देखते हैं कि माँ, बच्चे को कितने प्रेम से दूध पिलाती है, उससे उसकी क्षुधा तो शांत होती ही है साथ ही शक्ति भी प्राप्त होती है। वो माँ, बालक की आवश्यकता को जानती है तभी तो सोते हुए बालक को भी दूध पिलाकर तृप्त करती है जबकि सोता हुआ बालक जान ही नहीं पाता। इसी तरह गुरु के हृदय में भी माँ की तरह ही वत्सलता होती है और वत्सलता वश शिष्य पर दया बरसाता है अपना सब कुछ क्षण भर में उसे प्रदान कर पूर्ण कर देता है तभी तो कहा है "स्नेहं दयां वत्सलतां विधाय"।

मातृवत "गुरु" कोई साधनायें नहीं कराते बल्कि माँ की तरह ही अपने शिष्य पुत्र को गोद में उठा लेते हैं। आप देखते हैं कि गंगा स्नान के लिए बड़े बच्चे तो स्वयं पैदल चलते हैं किन्तु छोटे बच्चे को तो माँ अपने गोद में ही लेकर उसे गंगा स्नान करा देती है। उसे न तो घाटों पर चढ़ना-उतरना पड़ा न कोई अन्य परिश्रम करना पड़ा बल्कि शिशु को माँ की पवित्र गोद मिली

और गंगा स्नान का आनंद भी मिला। पुत्र फिर भी माँ के प्रेम को जान नहीं पाता। पुत्र के मल-मूत्र को साफ करना, स्वयं भूखे रहकर भी बच्चे के खाने की व्यवस्था करती है। माँ के उपकारों का ऋण कोई चुका नहीं सकता जबकि हम उसके उपकारों को देखते हैं, जानते हैं किन्तु गुरु के उपकारों को तो हम न देख पाते हैं और न ही जान पाते हैं जानें भी कैसे? हमें वह दृष्टि प्राप्त नहीं है कि हम गुरु को जान सकें।

कृपा ''गुरु'' ही करते हैं और शिष्य को वो दृष्टि प्रदान करते हैं जिससे शिष्य गुरु को जान सके। भगवान श्रीकृष्ण भी अर्जुन से यही कहते हैं ''हे अर्जुन! तू मेरे उस अनंत स्वरूप का दर्श इन प्राकृत नेत्रों से नहीं कर सकता। अतः मैं तु दिव्य नेत्र प्रदान करता हूँ।''

हे पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर गुरु महाराज! संसा सागर के माया-मोह में फंसा जीव आपको नह जान सकेगा, इसलिए हम पर इतनी कृपा कीजि कि हम परमपूज्य परमभागवत पंडित ज महाराज की वाणी पर पूर्ण विश्वास रख कर य मान लें कि ''गुरु ही हैं हरि तेरे'' और पूर्ण श्रद्ध और विश्वास के साथ अपने गुरु की भक्ति क सकें।

आत्म साक्षात्कार के साधन

आत्म साक्षात्कार के तीन मार्ग हैं—कर्म, उपासना और ज्ञान। उपासना निराकार और भक्ति साकार की होती है। कर्म प्राणमय कोश का साधन है, उपासना मनोमय कोश का और ज्ञान विज्ञानमय कोश का। इन तीनों के ऊपर आने वाली चौथी अवस्था का नाम—'प्रेम' है। जो आनन्दमय कोश में आती है। यह तीनों साधन हैं और प्रेम इनकी सिद्धि है। इस प्रेम की अवस्था में कर्म, नियम और इच्छा समाप्त हो जाती है, केवल तड़प रहती है। व्याकुलता और विरह इसके साधन हैं इस अवस्था ही को ''प्रेम'' कहते हैं जो अन्तिम स्टेज है। यह भी वास्तविक नहीं है, यह भी एक सीढ़ी है जिसको शास्त्रों ने ''साक्षात्कार'' के नाम से पुकारा है। इस स्थान पर कभी सामने आते हैं और कभी झट छुप जाते हैं। प्रेमी कुछ नहीं चाहता, केवल आलिंगन चाहता है और इसके लिए तड़पता है। इस स्थान में भी पूरा रूप दिखाई नहीं पड़ता। माया का एक झीना आवरण प्रेमी और प्रेम पात्र के बीच में रहता है जो उससे उसको अलग किये रहता है। मिलाप और वियोग में ही प्रेमी का समय कटता है। श्री मीराजी का जीवन इसी में गया, ब्रज गोपियों की भी यही दशा रही। विरह और व्याकुलता प्रेम के साधन हैं। भक्ति साधन है और प्रेम सिद्धि है।

परमपूज्य गुरुदेव

गुरु पूर्णिमा पर :

नये सूर्य को शत्-शत् प्रणाम

— श्री लखपति सिंह

अध्यात्म को सरल और सुगम बनाने और जन-जन तक पहुँचाने के लिये समय समय पर नये-नये प्रयोग होते रहे हैं। आज रामाश्रम सत्संग (मथुरा) भी अपनी कुछ मौलिक शोधों और खोजों के साथ इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान के साथ आगे बढ़ रहा है। लीक पर चलना आसान होता है, मगर मार्ग में सुधार करना, आसान रास्तों का अनुसंधान करना सबके वश की बात नहीं है। अनुभवी गुरु और महापुरुष ही यह काम कर सकते हैं। आज के युगपुरुष और अध्यात्म विद्या के महान अनुभवी परम संत परमपूज्य गुरुदेव जी ने गूढ़ अनुभव और सूक्ष्म दृष्टि के द्वारा अध्यात्म की अथाह गहराइयों से जो दुर्लभ मोती निकाल कर हमारे हवाले किए हैं वे अत्यन्त आश्चर्यजनक और मूल्यवान हैं। अध्यात्म की आकाश गंगा को आपने जन-जन के बीच इस सामान्य धरातल पर उतार कर प्रवाहित कर दिया है जिससे सामान्य जन भी जिन्हें सपने में भी विश्वास नहीं था कि वे आत्मगंगा में भी कभी स्नान कर सकेंगे, आज गंगा की पवित्र लहरों से जी भरकर खेल रहे हैं, जीवन का सच्चा आनन्द लाभ कर रहे हैं।

आपने बताया कि अध्यात्म सिद्धान्त नहीं व्यवहार है, वह पढ़ने, सुनने और कहने की चीज नहीं, बल्कि व्यवहार में उतारने और जीवन में जीने की चीज है। वह जड़ समाधियों में जड़ बन जाने की चीज नहीं बल्कि जीवन को और जीवन्त बनाने की चीज है। वह मात्र निजी कल्याण या मोक्ष की चीज नहीं, बल्कि समग्र जीवन की, समस्त विश्व की कल्याण साधना है। और अध्यात्म सिर्फ साधना से नहीं, नियम पालन मात्र से नहीं, जप, तपादि से नहीं, बल्कि प्रेम दया, क्षमा, सादगी, सत्यता, सरलता आदि मानवीय गुणों से प्राप्त होता है। अध्यात्म सिर्फ ईश्वर तत्व की खोज ही नहीं है, बल्कि अपने अन्दर आत्म शक्ति को जाग्रत करना, गहराई से उसका अनुभव करना, अपने आपको पहचानना भी है। यह पढ़ने-लिखने, कहने-सुनने की चीज नहीं, बल्कि हृदय में अनुभूत करने की चीज है।

आपने संपूर्ण अध्यात्म का निचोड़ स्वरूप एक छोटी-सी सरल साधना दी जिसे साधारण से साधारण सभी स्त्री पुरुष, अपढ़ मनुष्य भी घर-गृहस्थी का काम करते हुए, समस्त व्यवहारों को निभाते हुए, नियमित रूप से नित्य-प्रति पन्द्रह बीस मिनट के अभ्यास से बड़ी आसानी से जीवन का परम लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं, आत्म दर्शन कर सकते हैं। इसमें मौखिक उपदेश नहीं बस गुरु के एक इशारे से शिष्य का हृदय गुरु के हृदय से जा जुड़ता है। गुरु ईश्वर में लय होता है और इस तरह शिष्य सहज ही परमात्मा से जा

जुड़ता है। यह साधना अध्यात्म का सार है, मूल मंत्र है। रास्ते में अनेकों उतार-चढ़ाव आते हैं, मगर यदि साधक विश्वासपूर्वक जुड़ा रहा तो यह एक ही साधना उसे पूर्ण बना देती है।

ईश्वर के स्वरूप के विषय में सभी शास्त्रों में विशद वर्णन है, सभी विद्वान, पंडित, ज्ञानी और शास्त्रज्ञ उसका गहन अध्ययन और चिंतन मनन भी करते हैं, फिर भी वह इस विषय पर बहस करते हैं, वाद-विवाद करते हैं। वे द्विविधा और उलझन में, तर्क-वितर्क में फँसे अपना अमूल्य समय बर्बाद करते हैं। यहाँ रामाश्रम सत्संग का निश्चित अटल मत है कि "ईश्वर एक शक्ति है, न उसका कोई नाम है, न रूप, जिसने जो नाम रख लिया वही ठीक है।" और कि "वह साकार भी है, निराकार भी है और साकार निराकार से परे भी है।" तथा वह सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक है। वह कण-कण में व्याप्त है। यहाँ सारा झगड़ा, सारे तर्क-वितर्क समाप्त हो गये, न द्विविधा की गुंजाइश रही, न वाद-विवाद की जगह। जहाँ विद्वान जन शास्त्रों को रटकर भी किसी निश्चित सिद्धान्त पर नहीं पहुँच पाते वहाँ रामाश्रम सत्संग अटल विश्वास के साथ इस सिद्धान्त को प्रतिपादित ही नहीं करता, बल्कि यहाँ उसका अन्तर में प्रत्यक्ष अनुभव भी कराया जाता है।

यहाँ ईश्वर की प्राप्ति के लिये साधना के साथ प्रेम का होना आवश्यक बताया जाता है। सिर्फ साधना शुष्क ज्ञान के मरुस्थल में ले जाकर भटका देती है। और प्रेम भरी साधना ईश्वर के रमणीय प्रांगण में ले जाकर खड़ा कर देती है। यहाँ साधना का उद्देश्य मन का निर्मल हो
और एकाग्र होना माना जाता है। साधना मार्ग
साधन माध्यम है, साध्य नहीं है। यह साबुन है
अन्दर भरे विकार को साफ करती है, मन औ
बुद्धि को निर्मल बनाती है। घंटों ध्यान लगा
आवश्यक नहीं, बल्कि प्रेमी बनकर प्रेम बाँट
आवश्यक है। ईश्वर यह नहीं पूछेगा कि तुम
कितने व्रत-उपवास किये, कितने नाम जप कि
मगर यह जरूर पूछेगा कि तुमने मेरे पुत्रों क
कितनी सेवा की, कितना उन्हें प्यार किया
इसलिये जिस साधना से हृदय में प्रेम पैदा न
वह साक्षात्कार नहीं करा सकती। सच्ची साध
हमें ध्यानी ज्ञानी नहीं बल्कि प्रेमी, सज्जन औ
सेवक बनना सिखाती है।

यहाँ सत्संग को किसी संप्रदाय या गिरोह
रूप में नहीं देखा जाता यहाँ नियमों औ
पाबंदियों की चहारदीवारी नहीं है। यहाँ कोई
आकर बैठ सकता है, सत्संग में भाग ले सकता
चाहे वह किसी भी जाति, संप्रदाय का हो, कि
धर्म को माननेवाला हो या विधर्मी हो, पापी ह
गुनहगार हो, सब तरह से उपेक्षित हो तब
उसके लिये जगह है। यह माना जाता है कि रो
ही डॉक्टर के पास आते हैं, स्वस्थ तो स्वस्थ
ही। इसीलिये यहाँ किसी के लिये रोक नहीं है
यहाँ का आकाश सबके लिये खुला है। सत्सं
का दरबार ईश्वर का दरबार है। ईश्वर का दरब
सबके लिये खुला रहता है। सत्संग एक बह
हुयी पतित पावनी धारा है जिसमें स्नान कर
और उसके जल का पान करने का अधिका
सबको है।

आज तक परंपरा यही चली आ रही है और शास्त्रों का मत भी यही है कि किसी भी जिज्ञासु की अच्छी तरह परीक्षा ली जाय जब वह योग्य पाया जाय तभी उसको उपदेश का अधिकारी समझा जाय और उसे उपदेश दिया जाय। इसीलिए प्राचीन समय में गुरुजन जिज्ञासुओं की कठिन परीक्षा लिया करते थे, तभी उपदेश दिया करते थे। गुरुदेव ने कहा कि अब समय बदल गया है। लोगों में न उतनी सामर्थ्य है, न धैर्य है। जीवन बड़ा व्यस्त हो गया और समय उतना नहीं है। इसलिये उन्होंने अधिकारी अनधिकारी की परीक्षा लिये बिना सबको उपदेश दिया। आप का कहना था कि जो भी जिज्ञासु यहाँ आये हैं, सभी ईश्वर के पुत्र हैं और उसके भेजे हुए यहाँ आये हैं। हमको क्या अधिकार है कि उन्हें ज्ञान न दें, रास्ता न बताएँ। हम तो मालिक के नौकर हैं। हम तो सबको बतायेंगे जिन्हें चाह होगी वे अपनायेंगे, जिन्हें चाह नहीं होगी वे आगे का रास्ता लेंगे। बहुत से लोगों को तलाश तो रहती है, मगर संयोग नहीं जुट पाता उन्हें अनायास रास्ता मिल जाता है।

शास्त्रों में भी बताया है कि एक बार गुरु धारण करने पर उसे छोड़ना पाप है, अपराध है। गुरु देव ने कहा कि ज्ञान अनन्त है, यदि एक गुरु उसे पूरा न कर सके तो दूसरा गुरु करने में दोष नहीं है। परन्तु यदि एक ही गुरु पूर्ण आत्मज्ञानी मिल जाये तो दूसरा गुरु नहीं करना चाहिये। व्यावहारिक जीवन में भी हम देखते हैं, प्राथमिक स्कूल के शिक्षक अपना पाठ समाप्त कर बच्चे को माध्यमिक विद्यालय में भेज देते हैं, वहाँ की पढ़ाई पढ़ा के उच्च विद्यालय के शिक्षक के पास भेज देते हैं। इसी तरह एक गुरु कर्म का क्षेत्र पार कराते हैं, दूसरे गुरु उपासना का तो तीसरे गुरु ज्ञान का। एक ही पूर्ण आत्मज्ञानी गुरु शिष्य को सभी क्षेत्रों को पार कराके पूर्ण बना सकता है। आधे-अधूरे गुरु यह काम नहीं कर सकते, इसलिये गुरु बदलने में दोष नहीं है।

आपने एक नयी बात यह दी कि मेरी बतायी साधना को कुछ दिन करके देखो, यदि लाभ न दिखायी दे तो छोड़ दो, दूसरी जगह तलाश करो। अपना समय बर्बाद मत करो। हमें तुम्हारे कल्याण से मतलब है, जमात बढ़ाने से नहीं। आजकल ऐसे भी गुरु हैं जो एक बार वहाँ चला गया तो निकलना असंभव होता है। वे उन्हें नियमों में बाँध लेते हैं, पाप का भय दिखलाते हैं। मगर आपने यह खुली छूट दी कि अच्छा लगे, लाभ मालूम पड़े तो रहो, नहीं तो जिस खुशी से आये हो उसी खुशी से जा सकते हो। अध्यात्म का अर्थ सब का कल्याण है, श्रद्धा और विश्वास का जबरन शोषण नहीं। यहाँ यह आध्यात्मिक पारदर्शिता की अद्भुत मिसाल है, जो कहीं देखने में नहीं आती है।

एक और अच्छी चीज उन्होंने यह दी कि गुरु-शिष्य के रिश्ते को पिता-पुत्र के रिश्ते में बदल दिया। आपने देखा कि गुरु-शिष्य के रिश्ते में अनुशासन और औपचारिकताओं के कारण एक दूरी बनी रहती है। शिष्य दिल खोलकर गुरु से मिल नहीं पाता, खुलकर दिल की बात कह नहीं पाता हमेशा डरा-डरा रहता है कि कहीं किसी छोटी-सी भी भूल पर गुरुदेव

(शेष पृष्ठ 28 पर)

संत चरित-

महात्मा श्री वल्लभाचार्य

— श्री विश्वनाथ शर्मा

रामचरितमानस के रचनाकार गोस्वामी श्री तुलसीदास ने गुरु की महानता को उजागर करते हुए रामायण में व्यक्त किया है—

''श्री गुर पद नख मनि गन जोती।
सुमिरत दिव्य दृष्टि हियँ होती॥
दलन मोहतम सो सुप्रकासू।
बड़े भाग उर आवहिं जासू॥'' (1/5/3)

श्री गुरु के चरणकमल का अग्रिम अंग पांव की उंगलियों के नखों से निकलने वाले प्रकाश के स्मरण मात्र से हृदय में दिव्य दृष्टि उत्पन्न हो जाती है। इस आध्यात्मिक रहस्य का अनुभवी प्रमाण समकालीन अंधे संत श्री सूरदास ने अपनी भक्ति रचनाओं में सजीवता और यथार्थता के द्वारा दिया है जो कि आंख वाला अर्थात् दृष्टि वाला व्यक्ति ही कर सकता है। पदनख के सुप्रकाश की प्रमाणिकता के रहस्य को श्री सूरदास ने अपने देहांत के पूर्व क्षणों में सुनाया था। यथा—

भरोसो दृढ़ इन चरननि केरो,
श्री बल्लभ नखचंद्र छटा बिनु सब जग मांझ अंधेरो।
साधन नाहिं और या कलि में जासों होय निबेरो।
सूर कहा कहै द्विविध आंधरो बिना मोल को चेरो॥

अंधे सूरदासजी को दिव्यदृष्टि प्रदान करने वाले महात्मा उनके गुरु श्री वल्लभाचार्य जी थे। ऐसे महात्मा वल्लभाचार्य जी का चरित्र अध्यात्म के पथिकों के लिए प्रेरणादायी है। श्री वल्लभाचार्य का जन्म सन् 1478 में चंपारण्य (छत्तीसगढ़) में हुआ था। उस समय भारत की धर्मव्यवस्था और समाजिकता पर बहुत प्रहार हो रहा था और समाज में भगवद्भक्ति के शांतिपूर्ण स्थायी दिशाबोध की रिक्तता हो चली थी। ऐसी पृष्ठभूमि में श्री वल्लभाचार्य ने भागवत पुराण की भक्ति पद्धति को आधार मानकर अपनाया। आपने काशी में विद्याध्ययन किया और श्री माधवेन्द्रपुरी जी को अपना गुरु बनाया। आध्यात्मिक शिक्षा पूर्ण होने के उपरांत वे ब्रज (मथुरा-वृन्दावन) में आए। वहाँ से वे तीर्थाटन पर निकले। एक अवसर पर दक्षिण भारत के विजय नगरम् राज्य के प्रसिद्ध राजा श्री कृष्णदेवराय के दरबार में उनका पंडितों से शास्त्रार्थ हुआ। शास्त्रार्थ में वे सभी विद्वान पंडित हार गए और श्री वल्लभाचार्य को ''वैष्णवाचार्य'' की राजकीय उपाधि से सम्मानित किया। आगे भ्रमण करते हुए वे उत्तर भारत के प्रसिद्ध राज्य ओरछा (बुंदेलखंड) आए। ओरछा के बुंदेला क्षत्रीय राजा धर्मप्रिय, उदार और प्रजावत्सल थे। उनके दरबार में गुणीजन प्रोत्साहन पाते थे। उस दरबार में एक तांत्रिक विद्वान षटसरस्वती की बहुत धाक थी किंतु वह दंभी था। श्री बल्लभाचार्य ने भक्ति की महत्ता पर आधारित षटसरस्वती को शास्त्रार्थ में पराजित किया और भक्ति की गहरी छाप छोड़ी। ओरछा से चलकर वे पुनः ब्रजक्षेत्र में आए। संयोगवश मथुरा के तट पर विश्रामघाट पर दिल्ली के बादशाह सिकंदर लोदी के स्थानीय मुसलमान अधिकारी रुस्तमखाँ ने ऐसा यंत्र स्थापित किया था जिससे

हिन्दुओं की धर्म आस्था पर प्रहार होता था और वे बहुत पीड़ा पाते थे। इस यंत्रबाधा के विषय में बहुत किवदंतियां हैं। नागरिकों की प्रार्थना पर श्री वल्लभाचार्य ने सिकंदर लोदी को प्रभावशाली संदेश भेजा जिससे न केवल वह यंत्र हटा लिया गया अपितु हिंदुओं को पूजा करने की छूट मिली। उन्होंने विख्यात गोवर्धन तीर्थ में गिरिराज पहाड़ी पर श्रीनाथजी का विग्रह स्थापित किया। ''चौरासी वैष्णव वार्ता'' नामक ग्रंथ में श्री वल्लभाचार्य की चेष्टाओं और चरित्र का व्यापक वर्णन मिलता है। उन्होंने निवृत्तिपरक और प्रवृत्तिपरक विचारधाराओं का समन्वय करके भक्ति को पुष्टिमार्गीय बना कर नया रूप दिया जिसमें अनुग्रह के साथ मधुर भाव का समावेश था। उनके अनुसार भगवान जिस पर कृपा करते हैं उन्हें भक्ति प्राप्त होती है और भगवान का अनुग्रह पुष्टि है। उन्होंने पुष्टि को अनुग्रह की मात्रा के अनुसार चार प्रकार की बतलाई यथा प्रवाह पुष्टि, मर्यादा पुष्टि, पुष्टि-पुष्टि तथा शुद्ध पुष्टि। यहाँ शुद्ध पुष्टि ही भक्ति का चरम उद्देश्य है। इस शुद्धाद्वैत सिद्धांत को प्रकट करने से श्री वल्लभाचार्य को ''महाप्रभु'' की उपाधि से सुशोभित किया गया। दार्शनिक पक्ष में वह शुद्धाद्वैत कहलाता है और भक्तिपक्ष में वही पुष्टिमार्ग कहलाता है। उन्होंने अपने सभी शिष्यों को प्रचलित ब्रजभाषा-खड़ीबोली में रचनाएं करने का निर्देश दिया। उनके चार विख्यात अष्टछाप भक्त कवि शिष्य थे जो क्रमशः सूरदास, कुंभनदास, कृष्णदास और परमानंददास ही थे शेष चार अष्टछाप भक्त उनके पुत्र श्री विट्ठलनाथ के शिष्य हुए। उन्होंने पुष्टिमार्ग में ऊँच-नीच का भेद नहीं रखा। उन्होंने सती-प्रथा का विरोध किया और स्त्रियों को भी दीक्षा दी। वे आजीवन गृहस्थ रहे किन्तु अंतिम समय उन्हें सन्यासाश्रम में जाने की इच्छा हुई। उन्होंने सन्यास लेकर अपना नाम पूर्णानंद रखा और उनके जीवन का समापन काशी में हुआ। उन्होंने अपनी संपूर्ण रचनाएं संस्कृत भाषा में कीं। उनके छोटे-बड़े इकतीस ग्रंथ हैं जिनमें ब्रह्मसूत्र और भागवत पुराण जैसे ग्रंथों पर भाष्य व टीकाएं हैं। उनकी कतिपय भक्ति के निमित्त मान्यताएं निम्न प्रस्तुत हैं—

—भगवान कृष्ण प्रेम में जीवन की सार्थकताएँ हैं।

—भक्तिपूर्ण सदाचरण से प्रभु प्रसन्न होते हैं।

—जब तक भगवान का अनुग्रह नहीं होता तब तक सच्ची भक्ति का उदय नहीं होता है।

—गुरु की शरण में जाना नितांत आवश्यक है। गुरु के बिना ज्ञान मार्ग/भक्ति मार्ग में प्रवेश असंभव है। ✦✦

सूचना

रामाश्रम सत्संग, मथुरा के जिन उपकेन्द्रों पर साप्ताहिक सत्संगों का नियमित रूप से आयोजन होता है, वहाँ के आयोजकों से निवेदन है कि निम्न सूचनाएँ साधन प्रेस कार्यालय में पत्र, दूरभाष अथवा ई-मेल से भेजने की कृपा करें।

1. साप्ताहिक सत्संग का स्थान। 2. साप्ताहिक सत्संग आयोजन करने वाले का नाम, पता एवं फोन नम्बर। 3. साप्ताहिक सत्संग का समय एवं दिन।

गुरु पूर्णिमा पर्व पर :

शरणागति

— श्री ब्रजनन्दन सहाय

गुरु महाराज शरण गति दीजै।
शरणागत आरत जन जन को,
मुक्त हस्त मंगल कर दीजै॥
त्रिविध ताप भव क्लेश कलुष अघ,
मन के मीत भरम हर लीजै॥
चरण शरण देकर करुणामय,
कमठ अंड सम पालन कीजै॥
सत संगति के सुख संगम में,
विभा रूप प्रभु दर्शन दीजै॥
प्रेम पूर्ण पावन प्रसाद से,
मानव जन्म सफल कर दीजै॥
दीन अधम 'मोहन' के शत-शत,
वंदन नमन कृपा करि लीजै॥
प्रेम-वारि बरसा दो हे प्रभु,
भक्तों के तन मन सब भींजै॥
गुरु पूनम के दिव्य दिवस पर
जन जन का मंगल कर दीजै॥

✦✦

अच्छा साधक कैसे बनें ?

— श्री शिव प्रकाश अरोड़ा

गुरु पूर्णिमा या विशेष भंडारों पर गुरु महाराज जी विशेष कृपा करते हैं। वे दया के सागर हैं, अपनी कृपा का भंडार खोल देते हैं। वे चाहते हैं कि उनके द्वार पर आया प्रत्येक साधक निहाल हो जाए, खुली छूट देते हैं जिसकी जितनी पात्रता हो वो उतना ले जाए। दादा गुरु महात्माजी महाराज ने गुरु महाराजजी को एक महान संत बनाया, समर्थ गुरु बनाया, समस्त शक्तियाँ प्रदान कीं। वे भी यह चाहते थे कि उनका प्रत्येक साधक संत बने, अच्छा मानव बने, इस जीवन के आवागमन के चक्र से छुटकारा प्राप्त करे, इस लोक को स्वर्ग बनावे साथ ही परलोक में भी गुरु धाम में निवास करे। इसीलिए उन्होंने अमूल्य निधि के प्रथम खण्ड के प्रथम अध्याय में इशारा किया कि साधक को क्या बनना है। वे यह भी चाहते थे कि उनके पास आने वाले प्रत्येक व्यक्ति को ईश्वर की कृपा प्राप्त हो। इसलिए वे हमेशा खुले हृदय से आध्यात्मिक कृपा मौन उपदेश द्वारा खुली आंखों से बरसाया करते थे।

अच्छा साधक बनने के लिये संयम

अच्छा साधक बनने के लिए, गृहस्थ संत बनने के लिए उन्होंने तीन प्रकार के संयम बताए, प्रथम इन्द्रिय निग्रह, द्वितीय मन निग्रह एवं तृतीय बुद्धि निग्रह। इन तीनों के किए बिना मनुष्य का उद्धार नहीं हो सकता है। इन तीनों को नियन्त्रण करने के लिए शास्त्रों ने तीन उपाय भी बताए हैं, प्रथम के लिए कर्म, द्वितीय के लिए उपासना एवं तृतीय बुद्धि निग्रह के लिए ज्ञान। उसके लिए महर्षि पातंजलि द्वारा प्रतिपादित अष्टांग योग का भी वर्णन किया गया। आज के युग में अष्टांग योग के आठ चरणों को एक-एक करके साधने में कई जन्म लग सकते हैं साथ ही कठोर क्रियाएँ भी करनी पड़ती हैं जो हरेक के बस की बात नहीं है। न तो आज के जमाने के लोगों के पास इतना समय है न ही इतनी शक्ति। इसलिए गुरु महाराजजी ने बहुत ही सरल साधना का प्रतिपादन किया, साथ ही सरल उपाय भी बताए हैं।

परम पूज्य गुरु महाराज जी की बताई गई साधना उपासना की क्रिया है, जिसमें धारणा, ध्यान व समाधि द्वारा मन निग्रह एवं बुद्धि निग्रह किया जा सकता है। उन्होंने यह भी कहा कि उपासना की क्रिया में सफलता तब प्राप्त होती है जब इन्द्रियों का निग्रह हो जाए एवं हृदय निर्मल हो जाए। इसके लिए चित्त की वृत्तियों को संयमित करना होता है जैसे काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं मद। इसके अतिरिक्त निन्दा या आलोचना करने के स्वभाव को भी त्यागना होता है। साधक दृढ़ संकल्प द्वारा जब इन वृत्तियों को छोड़ने का प्रयास करता है तब गुरु शक्ति भी सहयोग करती है।

गुरु कृपा प्राप्त करने का उपाय

उन्होंने कहा कि साधक को अगर गुरु कृपा प्राप्त करनी है तो उसे चार बातें जीवन में धारण करनी होंगी जो हैं—1. सम्बन्ध 2. साधना 3. स्नेह व सेवा तथा 4. स्वाध्याय।

गुरु से सम्बन्ध

साधना में सफलता का पहला सूत्र है, गुरु से सम्बन्ध। इसके लिए वे कहा करते थे मिलते जुलते रहो, चिट्ठी-पत्री लिखते रहो इससे सम्बन्ध बनेगा। वास्तव में हम देखते हैं कि सम्बन्ध शिष्य की स्वयं की विचार अवस्था पर निर्भर करता है। प्रथम अवस्था में शिष्य गुरु को एक महान व्यक्ति समझता है वह यह सोचता है कि उनके गुरु एक महापुरुष हैं, ज्ञानी हैं एवं उनमें कुछ शक्तियां हैं। दूसरी स्थिति में वह सोचता है कि गुरु महाराज ईश्वर के समान् हैं उनमें बहुत शक्तियां हैं, वे ईश्वर से प्रार्थना करके बहुत कुछ कर सकते हैं। तृतीय स्थिति का साधक उन्हें अपना भगवान ही मानता है उसको यह विश्वास होता है कि वो बिधि का विधान बदल सकते हैं उनके द्वारा ही सब कार्य उसके लिए हो रहे हैं, वह उनके अतिरिक्त किसी और की तरफ देखता ही नहीं, न ही दूसरों को भजता है। जिसकी जैसी सोच वैसा सम्बन्ध, जिसका जैसा सम्बन्ध उसको वैसी ही प्राप्ति होती है। गुरु महाराज यह भी चाहते हैं कि साधक के सम्बन्ध उसके माता पिता के साथ, पत्नी के साथ व परिवारिजनों के साथ भी अच्छे रहें इसलिए सत्संग को एक परिवार बनाया न कि गुरु शिष्य का संस्थान। इसीलिये गुरु महाराजजी ने कहा कि उनसे व उनके परिवार से पारिवारिक सम्बन्ध बनाए जाने चाहिए ता[illegible] निष्काम प्रेम हो सके। साधक उन्हें बड़ा भा[illegible] पिताजी, चाचाजी, दादाजी जैसी इच्छा, मंशा [illegible] अच्छा लगे उन्हें वैसा ही मान कर सम्बोधित [illegible] सकते हैं। बहुत से साधक गुरु महाराजजी को [illegible] भी किसी न किसी उद्देश्य से देते हैं। गुरु [illegible] पास दिव्य दृष्टि होती है वो सब समझते [illegible] जिसकी जैसी भावना होती है वैसी ही कृपा [illegible] पर होती रहती है।

साधना में विश्वास

दूसरी आवश्यक बात है—साधना [illegible] विश्वास। साधना जो बताई जाती है उस[illegible] अक्षरशः पालन किया जाना जरूरी है, [illegible] महाराज जी ने बहुत रिसर्च करके यह साध[illegible] प्रतिपादित की है, यह कर्म, उपासना व ज्ञान [illegible] मिलौनी है, इससे स्थूल के मल, सूक्ष्म [illegible] आवरण व कारण के विक्षेप क्षय होते [illegible] साथ-साथ ही दिव्य प्रकाश की प्राप्ति से मान[illegible] जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति की जा सकती [illegible] दूसरे महात्माओं के साहित्य पढ़ने से अथ[illegible] किसी के कुछ कहने मात्र से साधक भ्रमित [illegible] जाता है, इससे गड़बड़ हो जाती है। इसलि[illegible] साधना जो बताई जाती है उसको उसी प्रक[illegible] करना जरूरी होता है। परम पूज्य पंडित [illegible] महाराज दिन में पांच बार ध्यान किया करते [illegible] गुरु महाराजजी ने सुबह, शाम व रात को सोने [illegible] पहिले ध्यान करना जरूरी बताया है साथ ही च[illegible] वक्त चिन्तन के बताए हैं, सुबह उठते ही, टहल[illegible] के वक्त, भोजन के समय व खाली समय मे[illegible] भोजन व टहलते समय मौन रह कर गु[illegible]

महाराजजी को याद करना होता है साथ ही अन्न को प्रकाश स्वरूप मान कर ग्रहण करने से साधन में जल्दी सफलता मिलती है। हर क्षण गुरु महाराजजी की उपस्थिति का भान रहे तभी आनन्द ही आनन्द मिलेगा।

सेवा व स्नेह

तीसरी आवश्यक बात है सेवा व स्नेह की, सेवा तभी हो सकती है जब कि सत्संगी भाईयों से प्रेम हो, गुरु मिशन से प्रेम हो। साधक गुरु महाराजजी की सेवा करना चाहता है बहुत ही अच्छी बात है लेकिन गुरु महाराज सत्संगियों की सेवा से ज्यादा प्रसन्न होते हैं वो भी निष्काम सेवा। कोई सेवा प्रतिष्ठा या नाम के लिए की जाती है वह सेवा नहीं है। एक भण्डारे में गुरु महाराजजी घूमने जाना चाह रहे थे उनके नहाने का समय हो गया था एक साधक ने प्रार्थना की कि मैं कुए से पानी निकाल दूँ आप नहा लें, तब गुरु महाराज जी ने कहा कि पहिले सत्संगी भाइयों को नहला दो और वो घूमने चले गए, वापस आए तब देखा उस सत्संगी भाई ने सबको कुए से पानी खींच-खींच कर नहलाया है, फिर उस भाई ने गुरु महाराजजी से नहाने के लिए कहा तब गुरु महाराजजी बहुत प्रसन्न हुए और कहा कि मेरा तो स्नान हो गया तुमने इनको नहलाया यानि मुझे नहलाया। आज भी भंडारों में बहुत से काम होते हैं, साधन प्रकाशन का वृहत रूप हो गया है उसमें सेवा दी जा सकती है। तन की सेवा भी बहुत मान्यता रखती है। वैसे तो सेवा तन, मन व धन से सामान्य साधक दे सकते हैं, आत्मिक सेवा तो आदरणीय आचार्य महोदय ही दे सकते हैं, जिसकी जैसी सामर्थ्य वैसी सेवा।

स्वाध्याय

चौथी बात जो महत्वपूर्ण है वह है स्वाध्याय–स्वाध्याय का अर्थ केवल साहित्य अध्ययन से ही नहीं है बल्कि व्यक्ति के स्वयं के अध्ययन से है। उसे हमेशा रात्रि को सोने से पहले अपने कर्मों का अध्ययन करना होता है, उसे यह महसूस करना होता है कि उसने कितनी गलतियाँ की हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष पर निन्दा व अपने कटु वचनों से कितनों का दिल दुखाया है, उन से अपने ऊपर कितने मल व आवरण के परदे और चढ़ाए हैं, वो गलतियां भविष्य में नहीं करनी हैं, उसे मन ही मन संकल्प लेकर अपने आचरण को ठीक करते हुए सहनशीलता बढ़ानी है। परमपूज्य छोटे भैया कहा करते थे कि सहनशीलता का स्तर ही सत्संगी का स्तर होता है। स्वाध्याय पर मनन व अमल करने पर ही सहनशीलता बढ़ेगी तथा दृष्टापन का भाव बढ़ेगा। प्रत्येक व्यक्ति में गुरु महाराजजी को देखते हुए दृष्टा बन कर कर्म करने की आदत होने पर ही वह समर्पण की स्थिति में पहुँच सकता है। जहाँ पहुँचे बिना उसका उद्धार नहीं है क्योंकि सच्चा शिष्य बनने के लिए स्थूल सूक्ष्म व कारण तीनों में ही गुरु से मिलाप करना जरूरी है। बस यही प्रार्थना है गुरु महाराजजी से कि हम जैसे हैं आप के हैं हममें निज शक्ति नहीं है कि हम समर्पण कर सकें। आप ही ऐसी कृपा कीजिए कि हम आपके हो सकें। ✦✦

प्राणीमात्र के पास दूसरे प्राणी को नुकसान पहुँचाने के अनेक अवसर आते हैं, पर उस पर करुणा करने के अवसर सीमित ही होते हैं। —बोधिसत्व

साहित्य परिचय

महात्मा श्रीरामचन्द्र जी की जीवनी

महापुरुष ईश्वरीय अंश लेकर संसार में प्रकट होते हैं। ऐसी महान आत्मायें भूले हुए और अचेत प्राणियों के पुनरुत्थान के लिए अपने स्वाभावानुकूल मनुष्य शरीर धारण करती हैं। ऐसी ही दिव्यात्मा समर्थ गुरु महात्मा श्री रामचन्द्रजी महाराज थे। समयानुकूल इन्होंने भूले-भटके जीवों के लिए मार्ग प्रशस्त किया और अपना कार्य समाप्त करके निज धाम को लौट गए।

प्रस्तुत पुस्तक में उनके जीवन चरित और उनके अमूल्य उपदेशों पर प्रकाश डाला गया है। भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, व्यवहार और परमार्थ की मिलौनीकर जिज्ञासु इस मार्ग में कैसे आगे बढ़ सकता है? योग विद्या में नवीन अन्वेषण क्या-क्या हुए और इसमें कितनी सरलता दी गई इत्यादि के विषय में वर्णन किया गया है। प्रेमी जन इसे ध्यानपूर्वक पढ़ें और लाभ उठाएँ।

परम भागवत पं. मिहीलाल जी का जीवन दर्पण

पूज्य गुरुदेव ने यज्ञ तीन प्रकार के बताये हैं। पहला–आधिभौतिक, दूसरा–आधिदैविक और तीसरा–आध्यात्मिक अथवा आत्मिक। तीसरा आत्मिक यज्ञ सबसे ऊँचा और उत्तम है। इसमें लोक और परलोक की वासनाओं को होम देना होता है। मुक्ति की भी इच्छा को त्याग देना होता है। इस यज्ञ का लाभ यह मिलता है कि यज्ञ कर्त्ता राग-द्वेष से परे हट, चिंताओं से मुक्त हो, एक असीम सुख व शांति का अनुभव करता है। पूज्य पंडितजी ऐसे ही आत्मिक यज्ञ में अपने आप को होम कर, गुरु चरणों में विलीन होकर इस स्वरूप को प्राप्त हुए थे। उन्हीं के जीवन के छोटे-बड़े, पर गहरे और गम्भीर प्रसंगों ने ''जीवन दर्पण का रूप लिया है।''

पाठकों को इन प्रसंगों में साधना, ध्यान और व्यवहार की बारीकियों के साथ प्रेम की मिठास और ज्ञान की सुगन्धि भी मिलेगी। ✦✦

पेज 21 का शेष भाग

नाराज न हो जायें। इसलिये उन्होंने पिता-पुत्र का एक सहज रिश्ता बनाया। पिता पुत्र के बीच कोई औपचारिकता नहीं होती। पुत्र दिल खोलकर मिलता है, अपनी बात खुलकर कहता है। आपने कहा कि गुरु से वैसे मिलो जैसे अपने परिवार से मिलते हो और कहा कि यह विद्या उपदेश देने से नहीं मिलती, यह तो परस्पर नजदीकी संबंध बनाने से, प्रेम बढ़ाने से, दूरी मिटाने से मिलती है। इसलिये यहाँ गुरु को पिता रूप में, माँ के रूप में, भाई के रूप में देखते हैं, और निःशंक होकर अपना समाधान पाते हैं।

इस तरह रामाश्रम सत्संग अपने अनुभवों के आधार पर नयी सोच के साथ अध्यात्म को नयी दिशा की ओर अग्रसर कर रहा है। यह गूढ़ अध्यात्म को सरलतम और बोधगम्य बनाकर जन-जन के लिये सुलभ बना रहा है। अध्यात्म के नये सूर्य पूज्य गुरुदेव को शत्-शत् प्रणाम! ✦✦

साधन प्रेस की प्रकाशित पुस्तकों की सूची

Item Name		Rate	Item Name		Rate
	समर्थ गुरु परमसंत श्री डॉ० चतुर्भुज सहाय जी		54.	संस्मरण पूज्य गुरुदेव	35.00
1.	साधना के अनुभव सजिल्द – 1 से 7	300.00	60.	जीवन दर्शन	40.00
372	साधना के अनुभव डीलक्स एडीशन (सजिल्द)	400.00	44.	सरल योग	18.00
2.	साधना के अनुभव – खण्ड 1	28.00	53.	ईश्वर दर्शन और उसके साधन	21.00
3.	साधना के अनुभव – खण्ड 2	35.00	281.	साधकों का मार्ग	10.00
4.	साधना के अनुभव – खण्ड 3	35.00	22.	श्री गुरुदेव के महत्वपूर्ण पत्र	10.00
5.	साधना के अनुभव – खण्ड 4	27.00	37.	हमारी योगसाधना	10.00
6.	साधना के अनुभव – खण्ड 5	28.00	182.	सन्देश सिद्धान्त और साधना	10.00
7.	साधना के अनुभव – खण्ड 6	30.00	38.	अमृत वचन	10.00
8.	साधना के अनुभव – खण्ड 7	27.00	43.	परमार्थ पथ के दस सारभूत सिद्धान्त	8.00
9.	आध्यात्मिक विषय मीमांसा भाग – 1	65.00	41.	पार होने की कुन्जी	9.00
10.	आध्यात्मिक विषय मीमांसा भाग – 2	50.00	49.	अभ्यासियों के कर्त्तव्य	7.00
11.	अमृत बिन्दु भाग-1	55.00	297.	योग की सरलता	8.00
12.	अलौकिक भक्तियोग	40.00	42.	संत सूफियों में गुरु प्रतिष्ठा	5.00
13.	आध्यात्मिक और शारीरिक ब्रह्मचर्य	38.00	19.	हमारा संत्सग कार्यक्रम और प्रार्थना	4.00
14.	संत श्री मीराबाई	36.00	173.	प्रथम अधिकार प्राप्ति फिर उपदेश	5.00
15.	गुरुभक्ता सहजोबाई	22.00	40.	दादागुरु जी का एक अमूल्य उपदेश	5.00
16.	संत श्री तुकाराम	25.00	39.	व्यावहारिक धर्म	7.00
17.	योग फिलासफी और नवीन साधना	35.00	45.	भृंगी साधन	5.00
18.	मृत्यु और मृत्यु के पश्चात्	15.00	46.	हमारा कर्त्तव्य	5.00
20.	महात्मा श्रीरामचन्द्र की जीवनी	20.00	48.	योग की विभूतियाँ	4.00
21.	भगवान श्रीकृष्ण की लीलायें	21.00	52.	राजयोग और शक्तिवाद	7.00
23.	अमूल्य निधि खण्ड 1	45.00	61.	अब कैसे कृपा की ओर देखें	4.00
24.	अमूल्य निधि खण्ड 2	48.00	170.	काल पुरुष दर्शन	4.00
25.	अमूल्य निधि खण्ड 3	45.00	169.	हमारा सिद्धान्त	10.00
26.	अमूल्य निधि खण्ड 4	34.00	171.	काल शक्ति और दयाल शक्ति	4.00
31.	रहस्यभरी गाथाएँ भाग 1	40.00	172.	प्रेम साधना	7.00
32.	रहस्यभरी गाथाएँ भाग 2	30.00	174.	परमार्थ और व्यवहार	5.00
35.	मानस दर्शन भाग 1	48.00	175.	प्रेम गली की पहरेदार निंदा	5.00
55.	अमृत कुण्ड भाग 1	40.00	289.	एक निष्ठा और विश्वास	6.00
56.	अमृत कुण्ड भाग 2	40.00	318.	स्वर्ग और अपवर्ग	4.00
57.	अमृत कुण्ड भाग 3	40.00	319.	आत्म दृष्टि और वेदान्त	4.00
34.	संत चरितावली	55.00	320.	दस अवतार	4.00
29.	परिविहार	40.00	334.	परमार्थ की गाड़ी	4.00
300.	पंचकोशी साधना	35.00	335.	भक्त-अजामिल	4.00
30.	पौराणिक गाथाएँ और उनके आध्यात्मिक रहस्य	32.00	338.	हजरत मूसा और तपस्वी खिजर	5.00
33.	उपनिषद् तत्वविवेचन	15.00	339.	हजरत मूसा और शैतान	7.00

321.	महात्मा श्री इब्राहीम अधम	8.00	225.	महाप्रभु की बा	9.00
340.	विचार और विवेक	5.00	227.	सत्य की ओर	8.00
341.	आदेश और अनुशीलन	4.00	228.	पुष्प सौरभ—1	14.00
342.	गुरु दर्शन	5.00	229.	पुष्प सौरभ—2	13.00
152.	श्री गुरु महाराज की संक्षिप्त जीवनी	4.00	230.	पुष्प सौरभ—3	14.00
360.	अनुभूतियाँ	5.00	231.	पुष्प सौरभ—4	13.00
50.	दस आलोक (केलेण्डर)	15.00	345.	आनन्द और उसका स्रोत	4.00
367.	हमारा सत्संग कार्यक्रम और प्रार्थना (फोल्डर)	3.00	234.	संत सभा	4.00
	परम भागवत परम संत पं० मिहीलाल जी द्वारा		235.	महान् तीर्थ भण्डारा	5.00
188.	साधना तत्व	100.00	343.	समर्पण	4.00
189.	अमृतम	32.00	236.	पूज्य पं० जी का एक अमूल्य उपदेश	5.00
190.	संतों की वार्ता	50.00	237.	हमारा सत्संग एक रिसर्च सेण्टर	4.00
191.	साधना में सफलता	29.00	238.	साधना का मूल	4.00
192.	गुरु तत्व	24.00	239.	अध्यात्म ज्ञान और सोमरस का पान	5.00
193.	पूजा तत्व	20.00	240.	जीवन सुधा	5.00
194.	उपासना	22.00	241.	धर्म एक प्रकाश	5.00
195.	सदाचार और जीवन	21.00	243.	स्थिति बदलें	4.00
196.	हरि दर्शन की यात्रा	24.00	298.	ईश्वर—दर्शन की आवश्यकता	5.00
197.	अनुभूति रत्नाकार खण्ड 1	65.00	344.	योग साधना में एक नई खोज	4.00
198.	अनुभूति रत्नाकार खण्ड 2	35.00		**अन्य लेखकों द्वारा लिखित —**	
199.	अनुभूति रत्नाकार खण्ड 3	38.00	359.	अमृत वाणी	25.00
201.	साधना और साधक खण्ड—2	33.00	69.	कल्याण मार्ग भाग (सजिल्द 1 से 3)	100.00
202.	प्रवचन पराग भाग—1	36.00	70.	नवनीत हृदय संत परम् पूज्य बड़े भैया जी	25.00
206.	सत्संग सरिता भाग—1	32.00	365.	आत्मदेश की अनुभूति	80.00
207.	सत्संग सरिता भाग—2	0.00	137.	अतीत, आगत और अनंत—1	
208.	साधना के चार सोपान	35.00		(आदर्श और आदेश)	35.00
245.	ईश्वर भजन में संसार बाधक नहीं सहायक है।	15.00	353.	अतीत, आगत और अनंत—3	
242.	पुण्य संस्मरण मातृत्व विवेचन (जिया माँ)	32.00		(आदर्श और आदेश)	40.00
209.	अध्यात्म रहस्य भाग—1	50.00	72.	अध्यात्म और व्यवहार (संशोधित)	85.00
210.	अध्यात्म रहस्य भाग—2	44.00	363.	साधन सुधा	16.00
212.	अध्यात्म रहस्य भाग—4	46.00	368.	ज्योति पुरुष की रश्मियाँ	50.00
213.	अध्यात्म रहस्य भाग—5	46.00	246.	परम् भागवत पं० मिहीलाल जी	60.00
214.	अध्यात्म रहस्य भाग—6	46.00	66.	परम् भागवत पं० मिहीलाल जी का जीवन दर्पण	46.00
215.	अध्यात्म रहस्य भाग—7	46.00	247.	परम् भागवत पं० मिहीलाल जी की शीतल वाणी	32.00
216.	अध्यात्म रहस्य भाग—8	43.00	63.	श्री विरल संजीवनी	40.00
361.	परम भागवत् अध्यात्म गीता	37.00	314.	सोमपान	52.00
222.	पत्रामृत	27.00	144.	राम एक यात्रा	10.00
226.	आत्म निरीक्षण	12.00	326.	हमारी साधना	5.00
224.	आनन्द की भूमि	8.00	271.	दुःख परमात्मा की देन है।	5.00
233.	ईश्वर-दर्शन के लिए	8.00	329.	तुम मुझसे सम्पर्क कर लो	4.00
232.	सत्संगियों से 1 से 4	9.00	362.	सौरभ	22.00

259.	ईश्वर भी खोज का विषय है।	48.00
346.	साधना जगत् में पूज्य गुरु महाराज की देन	10.00
251.	तराने मार्फत	18.00
250.	अध्यात्म के चार दौर	5.00
147.	हृदय शोधन	5.00
348.	मार्ग के दीपक—भाग—1	32.00
358	मार्ग के दीपक—भाग—2	40.00
357.	अक्स—ए—दिल (दिल का प्रतिबिम्ब)	32.00
370.	प्रेमानन्द के रंग	22.00
263.	अध्यात्म की किरणें (पहली किरण)	7.00
264.	अध्यात्म की किरणें (दूसरी किरण)	15.00
316.	अध्यात्म की बगिया का तीसरा फूल	14.00
322.	अध्यात्म की बगिया का चौथा फूल	14.00
328.	अध्यात्म की बगिया का पाँचवा फूल	19.00
336.	अध्यात्म की बगिया का छटवाँ फूल	14.00
267.	अध्यात्म की बगिया का सातवाँ फूल	15.00
337.	अध्यात्म की बगिया का ग्यारहवाँ फूल	20.00
327.	अध्यात्म में तौबा की महिमा	20.00
291.	सब्र	21.00
261.	साधक का चलना	10.00
262.	साधक का सोना	14.00
354.	आध्यात्मिक वार्तालाप	10.00
306.	गुरु ज्ञान	24.00
272.	भजनमाला भाग—1	30.00
371.	भजनमाला भाग—2	35.00
350.	चरणों की धूल (भजनान्जली)	18.00
349.	बिखरे मोती	30.00
369.	दूरियाँ कहाँ हैं?	36.00
324.	सूची पत्र	0.00
273.	रामाश्रम सत्संग संक्षिप्त परिचय	7.00
374.	गिफ्ट पैकिट	250.00
	अंग्रेजी में लिखित एवं रूपान्तरित :—	
130.	योग फिलासफी (अंग्रेजी)	7.00
153.	सरल योग (अंग्रेजी)	15.00
280.	साधकों का मार्ग (अंग्रेजी)	15.00
304.	हमारी योग साधना (अंग्रेजी)	12.00
150.	जागता कौन है (अंग्रेजी)?	3.00
149.	परमार्थ की गाड़ी (अंग्रेजी)	3.00
279.	परम् भागवत परम संत पं० मिहीलाल जी (अंग्रेजी)	50.00
333.	साधना के अनुभव—खण्ड 1 (अंग्रेजी)	40.00

रामाश्रम सत्संग, मथुरा के उपकेन्द्रों का भण्डारा/सत्संग कार्यक्रम

1. ग्वालियर भण्डारा :

दिनांक	:	31 जुलाई, 1 एवं 2 अगस्त 2015
सत्संग स्थल	:	श्याम वाटिका, सिमको तिराहा, गोले का मन्दिर
सम्पर्क सूत्र	:	प्रो० ब्रजेश कुमार शर्मा मो. 09425753377 श्री प्रदीप कुमार शर्मा मो. 09229229600

2. उदयपुर सत्संग कार्यक्रम :

दिनांक	:	2 (सायं से), 3 व 4 अक्टूबर 2015
सत्संग स्थल	:	भूपाल नोबल्स कालेज (बी. एन. कॉलेज), सेवाश्रम चौराहा के पास
सम्पर्क सूत्र	:	फोन 0294-2422645 मो. 09413833147

बोकारो भण्डारा

दिनांक 23. 24 एवं 25 अक्टूबर 2015

स्थान-सरस्वती विद्या मंदिर सेक्टर-3सी बोकारो स्टील सिटी

सम्पर्क सूत्र-

श्री विश्व विनायक सिंह

मोबा. 09431145690

08051163561

जिया माँ मेमोरियल ट्रस्ट

ट्रस्ट के लक्ष्य एवं उद्देश्य

ट्रस्ट का उद्देश्य है कि रामाश्रम सत्संग (मथुरा) के उन भाईयों को आर्थिक सहायता प्रदान की जा सके जो आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त दयनीय स्थिति में पड़े हैं। उद्देश्य की पूर्ति के लिये ट्रस्ट निर्धन विधवाओं को भी आर्थिक सहायता प्रदान करेगा। गम्भीर रूप से बीमार व्यक्तियों को चिकित्सा सम्बन्धी सहायता भी प्रदान की जायेगी।

जिया माँ मेमोरियल ट्रस्ट में जो सज्जन डोनेशन देना चाहें वे ट्रस्ट के नाम Account Payee ड्राफ्ट/मल्टीसिटी चैक द्वारा (कम से कम पाँच सौ रुपये) दे सकते हैं। कृपया धनराशि नकद अथवा मनी-आर्डर द्वारा भेजने का कष्ट न करें।

छात्र वृत्तियाँ इस प्रकार हैं

धनराशि उपलब्ध होने की दशा में निम्नलिखित मासिक छात्र वृत्तियाँ योग्य विद्यार्थियों को ट्रस्ट प्रदान करेगा-

1. समर्थ गुरु परमसंत डॉक्टर चतुर्भुज सहाय जी छात्रवृत्ति।
2. ब्रह्मलीन परमसन्त श्री मनमोहन लाल जी मेमोरियल छात्रवृत्ति।
3. ब्रह्मलीन परमसन्त पं. मिहीलाल जी मेमोरियल छात्रवृत्ति।
4. ब्रह्मलीन परसंत डॉ. बृजेन्द्र कुमार जी मेमोरियल छात्रवृत्ति।
5. ब्रह्मलीन परमसंत श्री हेमेन्द्र कुमार जी मेमोरियल छात्रवृत्ति।
6. ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. नरेन्द्र कुमार जी मेमोरियल छात्रवृत्ति।
7. परमपूज्या श्रीमती विनोद कुमारी जी (पूज्य बड़ी भाभी माँ) मेमोरियल स्कॉलरशिप (गर्ल्स-छात्रवृत्ति)।
8. अवर छात्र वृत्तियाँ (जूनियर स्कॉलरशिप)।

सभी छात्रवृत्तियों का शिक्षा सत्र प्रति वर्ष दस मास का होगा। छात्रवृत्ति प्राप्तकर्ता आगामी वर्ष के लिये अन्य अभ्यार्थियों के साथ पुनर्विचारित होगा यदि उसने कम से कम 60 प्रतिशत अंक परीक्षा में प्राप्त किये हों।

अत: जो भाई आर्थिक दृष्टि से दयनीय हैं या निर्धन मेधावी छात्र जो योग, दर्शन शास्त्र, चिकित्सा विज्ञान, इन्जीनियरिंग, मेडिकल के छात्र हैं या उस पर शोध कर रहे हैं अथवा इण्टरमीडिएट तक के छात्र हैं, उन छात्रों को ट्रस्ट छात्रवृत्ति प्रदान करता है।

इस सन्दर्भ में ट्रस्ट की आगामी बैठक टूण्डला भण्डारा के अवसर पर 6 सितम्बर 2015 को होगी। पूर्ण आवेदन फार्म निम्न पते पर 25 अगस्त 2015 तक अवश्य जमा करवाने की कृपा करें।

आलोक कुमार
सचिव
जिया माँ मेमोरियल ट्रस्ट 'साधन प्रकाशन'
डैम्पियर नगर, मथुरा 281001

नोट—जिया माँ मेमोरियल ट्रस्ट के विषय में जानकारी के लिए मो. नं. 08791487080 पर सम्पर्क करें।

visit : www.facebook.com/jiamaamemorialtrust.org

समाचार इधर-उधर के

क्यों होता है दर्द?

शरीर दर्द से हम अक्सर ही जूझते हैं। आमतौर पर उपचार से राहत भी मिल जाती है लेकिन मुश्किल तब आती है, जब दर्द की वजह का पता नहीं चल पाता। अगर शरीर के किसी हिस्से में एक हफ्ते से ज्यादा समय से दर्द हो रहा है तो उसकी डॉक्टरी जांच जरूरी है। यह किसी बड़ी समस्या का संकेत हो सकता है।

पिंडलियों में दर्द

मांसपेशियों में खिंचाव और ऐंठन के अलावा पिंडलियों में दर्द के कई और भी कारण होते हैं। कोलंबिया एशिया अस्पताल के ऑर्थोपेडिक्स और जॉइंट रिप्लेसमेंट सर्जन डॉ. जयंत अरोड़ा का कहना है, 'सपाट और कठोर जगहों पर कूदने दौड़ने से पिंडलियों और उनके आसपास की मांसपेशियों पर दबाव पड़ता है। लगातार ऐसा होने से सूजन के अलावा दर्द होता है और फ्रेक्चर का खतरा भी बढ़ जाता है।'

कारण : ज्यादा समय तक निष्क्रिय रहने, अपने उम्र के हिसाब से वजन ज्यादा होने, धूम्रपान और कुछ विशेष दवाओं का सेवन करने से जांघ और पैर के निचले हिस्से की नसों में खून के थक्के जम जाने की आशंका बढ़ जाती है। ऐसी स्थिति में होने वाला दर्द मोच जैसा लगता है। इस मामले में लापरवाही न करें, खून के जरिए थक्के का फेफडों या मस्तिष्क तक पहुँचना जानलेवा भी हो सकता है। पेरिफेरल आरटेरियल डिसीज (पीएडी) वह स्थिति है, जिसमें पैर या बांह की धमनियां सिकुड़ जाती हैं। ऐसा धमनियों में प्लाक जमने से होता है। सर गंगाराम अस्पताल के वेकुलर कैथ लैब एंड डायबिटिक फुट केयर सिस्टम के डायरेक्टर अजय यादव के अनुसार 'ऐसी स्थिति में धमनी की सतह पर बैड कॉलेस्ट्राल की परत जमने लगती है। इससे ऊंचाई की तरफ तेज चलने पर पिंडलियों में बहुत तेज दर्द होता है, पर आराम करने पर दर्द में राहत मिलती है।

पैर का दर्द

पैर के निचले हिस्से में छाले, फुंसी या मोच आना सामान्य है, लेकिन कुछ लोगों को एड़ी में भी दर्द रहता है। फ्लिप-फ्लॉप और फोम सोल वाली सैंडल पहनने से भी कई बार एड़ी का दर्द दूर नहीं हो पाता। आरामदायक फुटवियर न पहनने से पैरों की मांसपेशियों पर पड़ने वाला दबाव एड़ी घुटने और पैर में दर्द का कारण बन जाता है। ऑर्थो केयर क्लीनिक, मुंबई में ऑर्थोपेडिक कंसल्टेंट, निखिल अय्यर कहते हैं कि पैर के तलवे के घुमाव को ध्यान में रखते हुए स्नीकर्स या स्ट्रेप वाले जूते ही पहनें।

कारण : डॉ. अय्यर का कहना है कि एड़ी की हड्डी पर अत्यधिक दबाव पड़ने या चोट लगने से पूरा पैर दर्द करता है। प्लेंटर फेसिलिटिस पैर के टिशु में जलन होने की स्थिति है। गाउट (एक तरह का आर्थेराइटिस) के कारण भी सोने के समय दर्द का अहसास रहता है।

साभार—हिन्दुस्तान

निवेदन

1. साधन..... अगस्त 2015 से अपने 83 वें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। अध्यात्म विद्या प्रेमीजनों सत्संगियों, साधकों तथा अन्य प्रेमी पाठकों को इस पत्र की उपयोगिता मालूम ही है। पूज्य गुरुदेव के मिशन को जन-जन तक पहुँचाने में यह महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है। लेकिन आज कागज की महँगाई, स्याही (इंक) की कीमतें, बाइडिंग चार्जेज, कार्य करने वालों की वेतन वृद्धि व बढ़ी हुई बिजली (Electricity) की दरों के कारण इसके सुचारु रूप से प्रकाशन में आर्थिक कठिनाइयाँ आ रही हैं। इन सब कठिनाइयों के बावजूद इस वर्ष साधन का वार्षिक शुल्क नहीं बढ़ाया गया। इस वर्ष साधन का वार्षिक शुल्क 150/- ही रहेगा। दस वर्षीय अवधि की सदस्यता शुल्क रुपये 1350/- 20 वर्ष के लिये सदस्यता शुल्क 2500/- एवं भारत वर्ष के बाहर दूसरे देशों में रहने वालों के लिए साधन का वार्षिक शुल्क रु. 1400/- होगा।

2. मनी ऑर्डर फार्म में सन्देश के स्थान पर अपना ग्राहक नम्बर या नया ग्राहक होने से नया ग्राहक..... पूरा पता एवं पिनकोड साफ-साफ अवश्य लिखें।

3. साधन मासिक पत्रिका का वार्षिक शुल्क का मनीऑर्डर करते समय एक पोस्ट कार्ड प मनीऑर्डर नम्बर, जहाँ से भेजा है उस डाकखा का नाम व अपना नाम और पता साफ-साप लिखकर अलग से कार्यालय में भेज दें। जिसरे कार्यालय को पत्रिका भेजने में सुविधा हो।

4. जिन प्रेमी भाइयों पर साधन का वार्षिक शुल्क तथा पुस्तकों का मूल्य शेष है उनसे प्रार्थन है कि वे शीघ्र धनराशि भेजने एवं पुरानी रसीद बुक जमा करने का कष्ट करें।

5. डाकघर की कुछ अव्यवस्थाओं के कारण साधन पत्रिका जिन ग्राहकों को अगले माह की 20 तारीख तक यदि प्राप्त न हो सके तो वह साधन कार्यालय को पत्र, दूरभाष अथवा ई-मेल से सूचित कर दें ताकि उन्हें पुनः पत्रिका भेजी ज सके।

6. नये ग्राहक बनाने व पुराने ग्राहकों क नवीनीकरण करने के लिए रसीद बुक साधन कार्यालय या टूण्डला भण्डारा (5, 6, 7 सितम्बर 2015) पर बुक स्टाल से प्राप्त कर सकते हैं।

7. कृपया साधन प्रकाशन एवं साधन पत्रिक सम्बन्धित पूछताछ निम्न दूरभाष पर करें।

दूरभाष- (0565) 3290790, मो. 0931968080

प्रबन्ध सम्पादक

दिवंगत आत्माओं के लिए प्रार्थना

परम पूज्य श्री गुरु महाराज से प्रार्थना है कि मई 2015 माह के दौरान रामाश्रम सत्संग (मथुरा) से सम्बन्धित सभी दिवंगत आत्माओं को निजधाम में स्थान दें एवम् शोक संतप्त परिवारीजनों को धैर्य धारण करने की शक्ति प्रदान करें ।

वर्ष : 82 [जुलाई–2015] अंक : 12

राजस्थान तथा बिहार सरकार द्वारा स्वीकृत

✳ साधन के नियम ✳

1. गूढ़ तथा अनुभवी गुप्त रहस्यों को सरल भाषा द्वारा जनता तक पहुँचाना तथा सदाचार की शिक्षा देना ''साधन'' का मुख्य उद्देश्य है।
2. साधन प्रत्येक मास की 20-21 तारीख को प्रकाशित होता है। जिन ग्राहकों को पत्रिका अगले माह की 20 तारीख तक न मिले, उन्हें डाकखाने तथा कार्यालय से सम्पर्क करना उचित है। अंक न मिलने पर एक माह के अन्दर सूचित करने पर अंक दोबारा भेज दिया जायेगा।
3. साधन में आध्यात्मिक, सामाजिक तथा शारीरिक उन्नति के लेख ही छापे जायेंगे। राजनैतिक तथा अश्लील लेख भेजने का कोई भी सज्जन कष्ट न करें।
4. लेखों को घटाने–बढ़ाने और छापने, न छापने का अधिकार सम्पादक का रहेगा, परन्तु लेख प्रकाशित नहीं होने पर सम्पादक उत्तरदायी नहीं होगा। लेख सरल भाषा में कागज के एक ओर ही स्वच्छ लिखे हों।
5. ग्राहकों को पता व ग्राहक नम्बर साफ़–साफ़ लिखना चाहिए। उत्तर के लिए जबाबी कार्ड भेजना आवश्यक है।
6. साधन का वार्षिक शुल्क रुपये 150/- है। एक प्रति का शुल्क रुपये 16/- है। केवल विशेषांक का शुल्क रुपये 20/- है। भारतवर्ष से बाहर दूसरे देशों में रहने वालों के लिए साधन का वार्षिक शुल्क रुपये 1400/- है। एक वर्ष से कम के ग्राहक नहीं बनाये जायेंगे।
7. दस वर्षीय अवधि की सदस्यता शुल्क रुपये 1350/- है और बीस वर्षीय अवधि की सदस्यता शुल्क रुपये 2500/- है।
8. साधन का वार्षिक शुल्क साधारण मनीआर्डर, ई. एम. ओ., डिमाण्ड ड्राफ्ट अथवा चैक (जो मथुरा में देय हो) द्वारा भेज सकते हैं, जो ''साधन हिन्दी मन्थली'' के नाम 813, डैम्पियर नगर, मथुरा–281001 को भेजा जाये।
9. सत्संग साहित्य जो आप मंगाना चाहते हैं उसका कुल मूल्य एवं डाकखर्च कार्यालय से पता कर मनीआर्डर, ई.एम.ओ., डिमाण्ड ड्राफ्ट अथवा चैक द्वारा भेजकर मंगाया जा सकता है।

Licence to Post without Prepayment: Licence No.-AGRA/WPP-01/2015-2017
"Registered" Postal Regd.No.MTR/28/15-17: R.N.I. No- 2358 / 57
Date of Publication: 8th to 15th of every Month

साधन

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

मथुरा

प्रबन्ध सम्पादक : आलोक कुमार, साधन हिन्दी मन्थली, मथुरा
प्रकाशक : आलोक कुमार, साधन हिन्दी मन्थली, डैम्पियर नगर, मथुरा
मुद्रक : आलोक कुमार, साधन प्रेस, डैम्पियर नगर, मथुरा

E-mail: sadhanhindimonthly@gmail.com, sadhanhindimonthly@yahoo.co.in
Website: www.sadhan.in, www.facebook.com/sadhan.ramashram
Ph.: 0565-3290790, Mob.: 09319680800